रावणायन

गुरुदयालु शर्मा

श्रीमता

अग्रपूजा

आदि कवी चतुरास्यौ,
कमलज वल्मीकजौ वन्दे ।
लोक श्लोक विधात्रोर्,
ययो र्भिदा लेश मात्रेण ॥१॥

लेशमात्र=अत्यल्प । ले+शः (ल् में 'श्') =लोकः—श्लोकः ।

सदूषणा पि निर्दोषा,
सखरा पि सुकोमला,
नम स्तस्मै कृता येन,
रम्या रामायणी कथा ॥२॥

वन्दौ मुनि पद कन्ज,
रामायण जिन निरमयो ।
सखर, सुकोमल मन्जु,
दोष रहित दूषण सहित ॥३॥

अथ श्री 'राम कहानी' नाम आख्यायिका की (राक्षस वानर वर्णन स्वरूप) रावणायन नाम पूर्वपीठिका आरम्भ

—गुरुदयालु शर्मा

श्रीमती

वाल्मीकि कृत

रामायण पर आधारित

रावणायन



कथक्कड़ :

गुरुदयालु शर्मा

● प्रथम संस्करण : १९७७

● लेखक एवं प्रकाशक :
गुरुदयालु शर्मा
अनन्त भण्डार
४/६१, पंजाबी बाग,
नई दिल्ली-११००२६

मूल्य पांच रुपये केवल

● मुद्रक :
विक्रम प्रिंटर्स
२०, ईस्ट एवेन्यु मार्कीट,
पंजाबी बाग, नई दिल्ली-११००२६

श्रीमती निमल

रावणायन

पूर्वाभाष्यम्

(उत्तरमेघदूते ३८)

● सुरासुर संग्रामों में हमारे क्षत्रिय वीर देवराज इन्द्र के पक्ष में युद्ध करने जाया करते थे, रणभूमि चाहे सुरलोक में हो, असुरलोक में हो, या फिर मर्त्यलोक में हो।

इसी प्रसंग में एक बार उत्तर कोशलाधीश 'दशरथ' अयोध्या से विन्ध्य-शैवल पर्वतों के मध्यवर्ती दण्डकारण्य में लड़ने गया। वह मार्ग में चित्रकूट के मन्दाकिनी तटवर्ती ब्रह्मर्षि अग्निशर्मा = 'वाल्मीकि' के आश्रम में ठहरा। अनुकूल स्वभावानुसार महर्षि एवं महाराज में मित्रता हो गई।

दण्डक वन की संग्राम भूमि में अन्यान्य वीरों की तरह अरुणात्मज 'जटायु' भी इन्द्र की सहायता को आया हुआ था। अब इन दोनों रणबाँकुरे वीरों में भी मित्रता हो गई, जैसे कि प्रायः कला प्रेमियों में हुआ करता है।

राम-लक्ष्मण-सीता 'दण्डकवनवास' यात्रा में इन्हीं वाल्मीकि मुनि की तपोभूमि में कुटीर बनाकर रहे थे। यहां राम को बौद्धिक चर्चा के साथ-साथ पितृवात्सल्य भी पर्याप्त मिला। और यहीं भरत राम को लौटाने आया था।

भरत की सेना के सम्मर्द से आश्रम विक्षोभ हो[illegible]
मुनियों की तरह वाल्मीकि भी वह [illegible]

संगम के पास तमसा नदी के तीर पर नया आश्रमपद बनाकर रहने लगे थे जहां विवासिता सीता ने एक महिला आश्रम में अपने जीवन के अन्तिम दिन काटे थे।

● राम के अद्भुत आदर्श चरित्र एवं सीता सान्निध्य से आदि कवि वाल्मीकि को राम के जीवन पर काव्य लिखने की प्रेरणा मिली और उन्होंने उस पर एक सर्गबद्ध महाकाव्य लिख डाला। (टि०१)

इस महाकाव्य का नाम उन्होंने **'रामायण'** रक्खा, जिस में काव्यमयी रचना के साथ-साथ उन्होंने इतिहास एवं भूगोल को भी पूरा-पूरा स्थान दिया।

निबन्ध केवल कथानक से काव्य नहीं कहा जा सकता, यह तो इतिहास ही हुआ। तदुक्तम्—

"नहि कवे रितिवृत्त मात्रेणात्मार्थलाभः,

इतिहासादेव तत्सिद्धेः" ।

इस धारणा से कवि ने 'रामायण' में वाक् चमत्कार, ऋतु, वन, पुर, पर्वत, नदी, राजसभा, युद्ध, मृगया, आदि काव्य के अंगों का रोचक प्रतिपादन करते हुए उसे पूर्ण प्रबन्ध बना दिया, अथ च अपने मस्तिष्क में नायक के आदर्श गुणों की कल्पना करके उन्हें राम में भर दिया।

● रामायण रचियिता आदि कवि वाल्मीकि मुनि की मान्यता में राम ईश्वरावतार नहीं, प्रत्युत मर्यादापुरुषोत्तम महामानव था।

● राम के संगीसाथी बन्दर-रीछ-साँप-गीध-नहीं बल्कि महाशय भद्र पुरुष थे।

● एवं राक्षस वैदिक धर्मी, गो ब्राह्मण पूजक, आहिताग्नि, सज्जन थे। रामायण में जहाँ कहीं इसके विरुद्ध वर्णन हैं, वे प्रक्षिप्त हैं।

...म जन्म से हजारों वर्ष पहले रामायण की रचना कर दी थी'

श्रीमती निमल...

महर्षि वाल्मीकि राम के समकालीन थे और पितृमित्र होने से उन के आत्मीय भी, अतः उन के परवर्ती लेखकों की अपेक्षा वाल्मीकि के वचन अधिक विश्वसनीय प्रतीत होते हैं।

लोकप्रिय होने पर भी रामोपाख्यान में नानारूपता पाई जाती है। साम्प्रदायिक रंग चढ़ जाने से तो इस की राष्ट्रीयता एवं ऐतिहासिकता धुँधली पड़ गई है। अब राम हमारा अनुकरणीय आदर्श पुरुष नहीं रहा, प्रत्युत भजन मात्र से ही निःश्रेयस् दाता बन गया है। एवं उस के संगी-साथी, मित्र, सखा महावीर न हो कर 'बालविनोद एवं दैवी चमत्कार के प्रतीक' वन्दर, रीछ, गीध, शुक, सारण, शार्दूल, मृग, गधे, आदि पशु-पक्षी बन कर रह गए हैं। एक खासा कार्टून दीखता है।

यद्यपि इन्हों ने रामायण पर भी आक्रमण किया है एवं उस पर पूरा कब्जा कर बैठे हैं, पर ये उस में से तथ्यांश निकाल फेंकना भूल गए, और वे वहां प्राञ्जल भाषा में विद्यमान हैं, अथ च प्रक्षिप्त पाठ भी 'दाल भात में मूसल चन्द' बने बैठे हैं।

● इस निबन्ध में वाल्मीकि रामायण' की कथा वस्तु का यथासंभव उल्लंघन नहीं किया गया, जहां 'क्वचिद् अन्यतोपि' लिया है वहां उस का उद्धरण दे दिया गया है।

अतः यहां — इन दोनों आप्त वचनों का यथासंभव पालन किया गया है, कि :—

"नामूलं लिख्यते किञ्चित्"

"नानपेक्षित मुच्यते" —(मल्लीनाथः)

अर्थात् — 'विना प्रमाण कुछ नहीं लिखा गया'।

— 'व्यर्थ का विस्तार भी नहीं किया गया।।

● चिर काल से मेरे मन में उत्कण्ठा [illegible]

पर आधारित **'राम कहानी'** लिखूं, जिसमें भूगोल एवं इतिहास की स्फुट झलक मिले। (टि० १)

अथ च सर्व साधारण को ज्ञात हो कि रामायण रचयिता वाल्मीकि मुनि 'चाण्डाल'-चूहड़ा-चोर-डाकू नहीं, बल्कि वह तो ब्रह्मर्षि प्रचेता का दसवाँ पुत्र भार्गव ब्राह्मण था, जिसने आजीवन मन-वचन-कर्म द्वारा कोई पाप नहीं किया, जिसका पितृकृत नाम तो-'अग्नि शर्मा' था, पीछे स्थिर समाधि के कारण वल्मीक=वाँबी की-तरह एक स्थान पर बैठने से उसका नाम "वाल्मीकि" पड़ गया,-जैसे शंकर का "स्थाणु"।

एक वाल्मीकि नामी सन्त कलियुग में जिला अमृतसर (पंजाब) में भी हो चुका है, जो जन्म से चूहड़ा (भंगी) था, और डाकू था, एवं जो किसी वैष्णव सन्त के संसर्ग से साधु महात्मा बन गया। आज भी उसके वंशधर वहां 'रामतीर्थ' गाँव में रहते हैं। एवं वही व्यवसाय करते हैं।

और 'बालमीक' सम्प्रदाय ही प्रख्यात हो गया है।

वस नाम साम्य से यह मतिविभ्रम (गलत फ़हमी) हो गया है।

---

१. प्राचीन पुस्तकों में उल्लिखित व्यक्ति, पर्वत, नगरी, नदी, जनपद, वृक्ष, लता, फल, पशु, पक्षी आदि वस्तुओं का परिचय न देकर उसे व्यक्ति विशेष, पर्वत विशेषः, नगर विशेषः, नदी विशेषः लिखकर ही व्याख्याता लोग अपना कर्तव्य पूर्ण समझ लेते हैं।

कभी कभी तो व्याख्याकारों को स्वयं भी पता नहीं होता कि अमुक स्थान कहां है? ऐसे गलतफहमियां उपजती हैं

उदाहरण के लिए देखिए—मल्लीनाथ जैसे धुरंधर विद्वान् ने मेघदूत के प्रथम पद्य "यक्षः जनक तनया स्नान पुण्योदकेषु रामगिरि+आश्रमेषु बसतिं चक्रे" की व्याख्या करते हुए 'रामगिरि' को चित्रकूट लिख दिया है। हालांकि 'रामगिरि+आश्रम' पद से 'गोदावरी तटवर्ती पञ्चवटी का आश्रम अभिप्रेत है, जो कि आंध्र प्रदेश में है। (उत्तरमेघ ३८ में भी)

तभी तो रामगिरि से कैलासगिरि जाते हुए मेघ के मार्ग में मालक्षेत्र (मालेगांव), आम्रकूट, नर्मदा (रेवा) नदी, दशार्ण जनपद, विदिशा ...ी नदी, नीचैःनाम पर्वत, निर्विन्ध्या (शायद मन्दाकिनी) नदी, ...शाला पुरी इत्यादि स्थान पड़ेंगे।

● क्योंकि 'राम कहानी' तब तक पूरी नहीं होती जब तक कि उसके प्रतिनायक 'दशानन=रावण' का उपयुक्त वर्णन न किया जाय। १ और क्योंकि रावण आयु में राम से बड़ा था, एवं उसका इतिहास राम से पूर्वकालिक पड़ता है, अतः रावण का जीवन-चरित्र पहले जान लेना अपेक्षित है। अतः यह **'रावणायन'** नामी निवन्ध मुख्यग्रन्थ **'रामकहानी'** की पूर्वपीठिका रूप है।

● भक्तजन तो अपने इष्टदेव के प्रतिपक्षी को बुरा समझेंगे ही, बुरा कहेंगे भी। परन्तु काव्यपरम्परानुसार कविजन भी अच्छे खासे साधु सज्जन भी **'प्रतिनायक'** को बुरा प्रतिपादित करते हैं, जैसे कि कवि समय ख्याति है। कि :—

काव्य के नायक में सद्‌गुण दिखाने चाहियें, और प्रतिनायक में दुर्गुण, उसे 'मायावी-प्रचण्ड-चपल-घमण्डी-आत्मश्लाघी-पापी-व्यसनी प्रतिपादित करना चाहिये। जैसे राम का रावण। (टि० २)

तभी तो काव्य का लक्ष्य पूरा होगा कि :—

नायक की भांति आचरण करना चाहिये प्रतिनायक की भांति नहीं। (साहित्य दर्पण ३।१३३) (टि० ३)

यहाँ देखना है कि काव्य की कथावस्तु कल्पित हों तो कवि 'देवदत्त, यज्ञदत्त' को जैसा चाहे चित्रित कर दे, पर यदि कथानक ऐतिहासिक हो तो भी कवि के लिये निर्देश है कि :—

"यदि कोई ऐतिहासिक वस्तु प्रवन्ध के मुख्य रस अथवा नायक के स्तर को गिराने वाली दिखाई दे तो उसे सर्वथा छोड़ दो, अथवा उस में हेरफेर कर के ठीक कर लो।" (टि० ४)

यथा रामकृत 'प्रच्छन्न वाली वध', कई राम नाटककारों ने इस का वर्णन ही नहीं किया, किसी ने परस्पर युद्ध में राम के हाथों वाली को

---

१. वंश-वृत्त-वलादीनि वर्णयित्वा रिपोरपीत्युक्तेः।

२. धीरोद्धतः पापकारी व्यसनी प्रतिनायकः।
मायापरः प्रचण्ड श्चपलोऽहंकार संयुक्तः।
आत्मश्लाघा निरतो, धीरैर्धीरोद्धतः कथितः॥ (साहित्य दर्पण ३।३३)

३. नायकवत्प्रवर्तितव्यं न प्रतिनायकवत्।

४. यद् यस्यानुचितं वस्तु नायकस्य रसस्य वा।
सर्वथा तत्परित्याज्यम्, अन्यथा वा प्रकल्पयेत्

मरवा दिया है। किसी ने 'मृगरूप' में उसका 'वध' करवा दिया है।

भाव यह है कि तथ्य को वितथ करना, उसे तोड़-मरोड़ कर रख देना भी कवि का वैधानिक अधिकार है।

बस यही अनर्थ रावण के साथ हुआ है।

परन्तु आदि कवि **वाल्मीकि** मुनि ने ऐसा नहीं किया, शायद उस समय उपरोक्त, कवि समय निर्धारित न हुआ हो, जो कि महाभारतकार कृष्ण द्वैपायन के समय में पराकाष्टा को पहुँच गया था। जिस ने सुयोधन, सुशासन, सुशील, सुशीला आदि धार्तराष्ट्रों को दुर्योधन, दुश्शासन, दुश्शील, दुश्शीला बना डाला। एवं द्यूतव्यसनी, गुरु हत्यारे, पितामहघाती महा भूठे रणभगौड़े को युधिष्ठिर (युधि+स्थिर) एवं धर्मपुत्र बना दिया।

धार्तराष्ट्रों को गंगा में गोते देने वाले, लाक्षागृह के निर्माण एवं दाह करने वाले, भाई का रक्त पीने वाले, गदायुद्ध के नियमों को तोड़ने वाले, ताऊ को जली-कटी सुनाने वाले भीम को 'पूतनानामा' बना दिया— 'पापं प्रणश्यति वृकोदर कीर्तनेन'।

कारण यह है कि जहाँ 'द्वैपायन कृष्ण' नित्य राज भोग उड़ाता था, (राणीभोग भी,) वहाँ महर्षि वाल्मीकि रामाश्वमेध में अपनी मण्डली के लिये भोजन अपने साथ लाया था अपने कुटीर स्वयं बनवाए थे।

अतएव उसने अपने काव्य के प्रतिनायक भी रावण के साथ ऐसा अन्याय नहीं किया, उसने रावण की मुक्तकण्ठ से प्रशंसा की है, आइए, हम देखें कि आदि कवि ने उसे कैसे-कैसे विशेषण दिये हैं :—

"शस्त्रभृतां वरः, आहिताग्निः अत्युन्नत महोत्साहः, चण्डविक्रमः, तेजस्वी, बलवान्, शूरः, शुद्धाचारः, धर्मे प्रयतमानः, धर्म निष्ठः, धर्मात्मा, धर्मपरः, धर्मपथेस्थितः, धर्मज्ञः, सन्मार्गी, शुचिः, स्वाध्यायपरः, सत्परिश्रमी, सत्यवान् सरल, शमी, सदाचारी, देव पूजकः, ब्राह्मणभक्तः, विद्वान् वेदान्त वेत्ता, वेदज्ञः, सुशीलः, महातपस्वी, कर्मयोगी, त्रिलोक विजयी, निर्भयः वैकुण्ठाधिकारी, वीरः, रणसन्मुखः, राक्षस पुंगवः, आर्यः, सौम्यः, दिव्यरूपवान्, अधृष्यः, धैर्यवान्, महासत्वः, महाद्युतिः, सर्वलक्षणक्तः, [illegible]ाकारः, परमशैवः, गायनाचार्यः, विज्ञानी, **महात्मा**, ।

श्रीमती [illegible] क्रुद्धः कर्तुमेकार्णवं जगत्,"।

जिस की द्युति को देख कर उग्रतेजस्वी भी हनुमान् (निर्धूतस्तस्य तेजसा) रावण के तेज से हतप्रभ हो गया था।

अथच राम ने भी रावण को **महात्मा** तथा अपना बड़ा भाई तक कह दिया था। दिङ् मात्र देखिये :— (वा०रा० ५।२०।४६, ५।६।६३, ५।१०।१२, ६।११।१६, ३।४६।३२, ७।१४।१४, ७।५।११) आदि।

● इस निबन्ध में रावण के मातृवंश तथा पितृवंश (दोनों) का वर्णन किया गया है, अतः इसका नाम **'रावणायन'** रखने की धृष्टता की गई है।

नामकरण एकदम नया है, चौंका देने वाला भी, हृदय में झटका लगा देने वाला भी। आपात मात्र से ऐसा लगता है कि इसमें राम की निन्दा होगी ही। पर वास्तव में ऐसा कुछ नहीं।

हां, मैं मानता हूं कि रावण कई बातों में राम से आगे था, परन्तु वह सामूहिक रूप से (औसतन) राम का समकक्ष नहीं हो सका, विशेषतया शील-त्याग-दृढ़ता-आदर्शता आदि गुणों में। (क्यों कि वह प्रतिनायक था)

कैकयी भी कहती है कि 'राम परस्त्री को तो आँख उठा कर भी नहीं देखता'। (वाल्मीकि रामायण-काण्ड २ सर्ग ७२ श्लोक ४८)

और रावण 'त्राहि मां गुरुजन !' कहती हुई भी रम्भा को नहीं छोड़ता। (वा० रा० ७।२६।४०)

रावण ने पितृ निर्देश की अवहेलना की, ज्येष्ठ भ्राता की प्रताड़ना की, छोटे भाई को अपमानित किया। और राम ने पितृ आज्ञा से चौदह वर्ष वनयातनाएं सहीं, एवं भाइयों को आत्मवत् समझा।

कहते हैं कि—मुगलसम्राट् अकबर कहा करता था कि मैं राणा प्रताप की वीरता का कायल हूं, पर हम दोनों में एक अन्तर है कि मैं [illegible] मित्र बनाना जानता हूँ, जब कि राणा तुनकमिजाजी [illegible] शत्रु बना डालता है।

यही अन्तर राम एवं रावण में था, जहाँ राम ने अकिञ्चन होते हुए भी सुग्रीव जैसे अजनबी की सहायता पा ली, अथच विभीषण सरीखे शत्रु के भाई को सहायक बना लिया। वहाँ रावण ने कुबेर-विभीषण-अविन्ध्य-त्रिजटा-सरमा जैसे आत्मजनों को शत्रु बना डाला।

रावण में राम की अपेक्षा राजनैतिक सूझबूझ में भी न्यूनता थी।

- उसने सीता वियोग में व्याकुल राम को हानि नहीं पहुँचाई।
- विभीषण आदि विद्रोहियों को बंदी बनाने की अपेक्षा बेरोकटोक शत्रुपक्ष में जाने दिया।
- सागर पर सेतु निर्माण में विघ्न नहीं डाला।
- निकुम्भिला क्षेत्र इतना असुरक्षित रक्खा कि वहां ऋक्षवाहिनी अलक्षित ही जा पहुँची, जब कि वहाँ युवराज मेघनाद पूजा कर रहा था।
- राम पत्नी की गोद में लेट कर भी तेरह वर्ष ब्रह्मचारी रहा।
- राम में असंख्य आदर्श गुण थे, जितने कि मेघधारा में जल बिन्दू, आकाश में तारे, एवं बालू के कण। (टि० १)

हां, तो **'रावणायन'** नाम मात्र से चौंकिये नहीं।

"तेल देखिये तेल की धार देखिये"।

---

१. पर्जन्यस्य यथा धारा, यथा च दिवि तारका:।
सिकता रेणवो यद्वत्, संख्यया परिवर्जिता:॥

श्रीमती

महर्षि वाल्मीकिकृत

(रामायण पर आधारित)

रावणायन

कथावतार

रावण क्योंकि मातृतः राक्षस था, अथ च कथा की श्रृंखला को ठीक बैठाने के लिये भी उसके मातृ वंश का वर्णन पहले किया जाएगा।

रावण का मातृपक्षीय राक्षस वंश

—ब्रह्मा ने हिमालय पर्वत पर मानसिक सृष्टि के रूप में कुछेक सत्त्वों का सृजन किया, वे सत्त्व प्रजापति से बोले—विभो ! हम भूखे हैं, कोई काम धन्धा बताइये, हम क्या करें ?

स्रष्टा ने कहा—भई ! अभी तो दो ही कार्य हैं—१ यज्ञ एवं २ रक्षा। बोलो तुम में से कौन क्या काम करेगा ?

उन में से कुछेक बोले—'वयं यक्षामः' अर्थात् हम यज्ञ करेंगे। अन्य कहने लगे—'वयं रक्षामः' अर्थात् हमें रक्षा कार्य स्वीकार है। इस पर ब्रह्मा ने व्यवस्था दी कि :—

देखो भई ! जिन्होंने 'वयं यक्षामः' कहा है वे 'यक्ष' कहाएंगे, और जिन्होंने 'रक्षामो वयम्' कहा है वे 'राक्षस' प्रसिद्ध होंगे। (टि० १)

---

१. यक्षाम इति यै रुक्तं, यक्षा एव भवन्तु ते ।
रक्षाम इति यै रुक्तं राक्षसास्ते भवन्तु वः ॥

● इस से ज्ञात होता है कि तब 'यक्ष' एवं 'राक्षस' संज्ञाएँ ऐच्छिक थीं, जो पीछे रूढ़ होकर 'ज्ञातिवाचक' हो गईं। यथा — विश्रवण मुनि का बड़ा पुत्र कुबेर 'यक्ष' कहलाया, अन्य सन्तति 'राक्षस' कहाई। अथ च सत्कर्मा, भक्त होने पर भी विभीषण 'राक्षस' ही कहा जाता रहा।

इन 'वयं रक्षामः' कहने वाले सत्त्वों में दो भाई थे, "हेति" और "प्रहेति"। छोटा भाई 'प्रहेति' तप करने के लिये वानप्रस्थ हो गया, और 'हेति' ने स्वयंबर में सूर्य की पुत्री काल की बहन 'भया' से व्याह कर लिया। (७।४।१६) उनके 'विद्युत्केश' नामी तेजस्वी पुत्र उत्पन्न हुआ।

उस के युवा होने पर 'हेति' ने सन्ध्या की पुत्री (सूर्य की दौहित्री) 'अलका' से उस के विवाह का प्रस्ताव किया। संध्या ने सोचा कि पुत्री पराया धन होता है, एवं 'अलका' वयस्क भी तो हो गई है और वर भी योग्य है, अतः उस ने 'हेति' का प्रस्ताव स्वीकार कर के उन का विवाह करा दिया।

सन्ध्या पुत्री अति सुन्दरी तथा अत्यन्त कामिनी थी, वह पति से अति प्रेम करती थी, कालक्रम से उनके पुत्र पैदा हुआ, परन्तु वह राक्षसी इतनीं विषयासक्त रहती कि पुत्र की पर्वाह ही नहीं करती थी, वह बेचारा अबोध शिशु एकाकी पड़ा भूखा-प्यासा रोता चिल्लाता रहता।

एक दिन वह अकेला पड़ा मुँह में अपनी मूठ दिये विलख रहा था कि भगवान् शिव-शिवा उधर आ निकले। जगदम्बा को निरीह शिशु पर दया आ गई, उसका मातृ वात्सल्य उमड़ आया, वे बच्चे को उठा ले गए।

इस मनोहर बाल के बाल सुन्दर-घुँघराले थे, अतः उस का नाम 'सुकेश' रख दिया, उसे पाल-पोस कर बड़ा किया, पढ़ाया-लिखाया, उसे विमान भी दिया, अनेक वर भी।

वयस्क होने पर 'ग्रामणी' नामी गन्धर्व की पुत्री 'देववती' से [illegible] करवा दिया। आनन्दपूर्वक रहते हुए उनके तीन पुत्र उत्पन्न
श्रीमती नि[illegible] और माली।

युवा होने पर धार्मिक पिता के तपोलब्ध ऐश्वर्य को देखकर उन के हृदयों में भी तपस्या करने की इच्छा पैदा हुई, और वे सुमेरु पर्वत पर जाकर तप करने लगे।

उनके सत्य-सरलता-शम-दम-नियम-पूर्वक घोर तप से प्रसन्न होकर ब्रह्मा ने आकर उनसे वर माँगने को कहा।

वे बोले—देव! आप हमें ये वर दीजिये कि हम दुर्जेय, शत्रुहन्ता, चिरञ्जीवि, प्रभावशाली एवं परस्पर संगठित होकर रहें। ब्रह्मा 'तथास्तु' कह कर चले गए। (टि० १)

वर पाकर वे तीनों भाई विश्वकर्मा के पास जा कर कहने लगे, कि आप बड़े बड़े लोगों के भवन बनाते हैं। हमें भी किसी रम्य स्थान में लक्ष्मीपतियों जैसा भवन बना दीजिये। (७।५।२२)

विश्वकर्मा ने कहा कि मैंने दक्षिण सागर के लंका द्वीप में त्रिकूट पर्वत के मध्यम कूट को **यन्त्रों** से काट कर शतवर्गयोजन भूखण्ड को समतल करके उस पर एक सुवर्णमयी भव्य नगरी का निर्माण किया है। यह नगरी इन्द्र के आदेश (आर्डर) पर बनवाई गई है पर उसे हस्तान्तरित नहीं हुई, वह दुर्ग तुम्हारे लिये अजेय शरण होगा, तुम वहाँ जा कर रहो।

विश्वकर्मा का सुझाव मानकर वे हजारों राक्षसों के दलबल सहित वहाँ जा बसे, एवं लंका में प्रथम राक्षसराज्य स्थापित हो गया।

---

१. वरप्राप्तं पितुस्ते तु ज्ञात्वैश्वर्यं तपोबलात्।
तपस्तप्तुं गता मेरुं, भ्रातरः कृत निश्चयाः ॥१०॥
प्रगृह्य नियमान् घोरान्, राक्षसा नृपसत्तम।
सत्यार्जव शमोपेतैस्, तपोभिर्भुवि दुर्लभैः ॥११॥
ततो विभुश्चतुर्वक्त्रो विमान वरमाश्रितः।
सुकेशपुत्रानामन्त्र्य वरदो स्मीत्यभाषत ॥१३॥
अजेयाः शत्रुहन्तारः तथैव चिर जीविनः।
प्रभविष्णवो भवामेति, परस्पर मनुव्रताः ॥१[illegible]

कुछ समयानन्तर 'नर्मदा' नाम्नी गन्धर्व महिला ने अपनी तीन गुणवती कन्याएं उन्हें व्याह दीं, कालक्रम से इन चन्द्रमुखी ललनाओं से इनके निम्न लिखित सन्तानें उत्पन्न हुईं।

माल्यवान् के 'सुन्दरी' नाम्नी पत्नी से—१ वज्रमुष्टि, २ विरूपाक्ष, ३ दुर्मुख, ४ सुप्तघ्न, ५ यज्ञकोप, ६ मत्त, ७ उन्मत्त ये सात पुत्र जन्मे, 'अनिला, नाम्नी एक पुत्री हुई, इसे विश्वावसु से 'कुम्भीनसी' नाम्नी पुत्री हुई, जो मधुरेश 'मधु' की पत्नी थी। (टि० १)

● सुमाली के 'वसुमती' नाम की पत्नी से दस पुत्र तथा दो पुत्रियाँ हुए, जिनके नाम ये हैं :—

१ प्रहस्त, २ अकम्पन, ३ विकट, ४ कालिका मुख, ५ धूम्राक्ष, ६ दण्ड, ७ सुपार्श्व, ८ संह्लादी, ९ प्रघस, १० भास, ये दस पुत्र, तथा १ पुष्पोत्कटा, २ राका, ये दो पुत्रियाँ।

● 'पुष्पोत्कटा' के रावण, कुम्भकर्ण दो पुत्र थे।
● 'राका' का पुत्र खर तथा पुत्री चन्द्रनखा=शूर्पणखा थी।

● माली के 'वसुदा' नाम्नी गन्धर्वी पत्नी से चार पुत्र और एक पुत्री पैदा हुए, पुत्र— १ अनल, २ अनिल, ३ हर, ४ संपाती, तथा पुत्री मालिनी। यह विभीषण की माता थी।

देवासुर कलह का श्रीगणेश

—दिव्या पुरी लंका देवराज 'इन्द्र' के आदेश से बनाई गई थी, अभी उसकी वास्तुप्रतिष्ठा भी नहीं होने पाई थी कि विश्वकर्मा ने किसी और को दे दी, इससे इन्द्र के सम्मान को ठेस लगना स्वाभाविक था, इन्द्र को जब लंका में राक्षस राज्य स्थापित होने की सूचना मिली तो

---

१. कोई पिता अपने नवजात शिशु का ऐसा नाम नहीं रखता, विशेषत: माल्यवान् सरीखा महाविद्वान् नीतिनिपुण रावण का प्रधानमन्त्री। कहते हैं कि "ज्ञायते [illegible]त्ततेर्नाम धारणात्" अत: ये नाम द्वेषमूलक लगते हैं, दुर्योधन

श्रीमती नि[illegible]

उसने आपत्ति की, एवं उसे अपने समर्पण करने का अनुरोध किया, पर मुफ्त में मिले माल को कौन छोड़ना चाहेगा ? वह भी प्राप्तवर सशक्त मनस्वी व्यक्ति ?

बस दोनों पक्षों में ठन गई, जिसके परिणाम स्वरूप भयानक संग्राम छिड़ गया।

● वैदिक इन्द्र चाहे कितना ही वीर विक्रान्त रहा होगा, एवं ऋग्वेद में उसकी स्तुति के चाहे कितने ही सूक्त भरे पड़े हों, पर आज उसकी वह साख नहीं रही। पौराणिक काल में तो वह निरा विलासी कपटी-ईर्षालु एवं भीरु बनकर रह गया था। फलतः उसकी हार हो गई।

उस समय देवगण राज्यों का 'महेन्द्र' अर्थात् राष्ट्रपति "शक्र" था, एवं विष्णु 'उपेन्द्र' अर्थात् उपराष्ट्रपति था। उन दिनों मायापति "विष्णु" कूटनीति, कूटवेष, कूटाचार, मायायुद्ध में सिद्धहस्त था।

उसे धर्म-अधर्म-छलबल-न्याय-अन्याय-पूज्यापूज्य मर्यादा की कुछ भी हेयोपादेयता नहीं थी।

वृन्दा का सतीत्व भंग करना पड़े, बलि की वदान्यता का दुरुपयोग करना पड़े, पुंस्त्व छोड़कर मोहिनी कामिनी की भूमिका निभानी पड़े, प्रच्छन्नघात, झूठ बोलना, भ्रूणहत्या, गोघात, करना पड़े। जैसे तैसे कार्य सिद्ध होना चाहिये। (टि० १)

अतएव महेन्द्र को उपेन्द्र पर अन्तिम टेक थी, एवं उसकी सहायता से सुकेश पुत्रों की हार हुई। युद्ध में 'माली' मारा गया, तथा माल्यवान् और सुमाली भाग कर लंका में आ गए, पर विष्णु ने उन्हें वहां से भी खदेड़ दिया।

माल्यवान् 'मलाया' में जा बसा, तथा सुमाली ने 'सुमाली द्वीप' में शरण ली। पर इन्होंने भारत को भुलाया नहीं, वे बराबर इधर की टोह लेते रहे, एवं गुप्त प्रकट येन केन अपने सम्बन्धियों से मिलते-जुलते रहे।

---

१. जैसे कि भल्लट कवि ने कहा है :-

पुंस्त्वादपि प्रविचलेद् यदि यद्यधोपि यायाद् यदि प्रणयने न महानपि [illegible]
अभ्युद्धरेत् तदपि विश्व मितीदृशीयं केनापिदिक् प्रकटिता [illegible]
(इस में मोहिनी, कूर्म, वराह, वामन, रूपों [illegible]

रावण का पितृवंश

ब्रह्मा का मानसपुत्र 'पुलस्त्य' मुनि हिमालयस्थित राजर्षि 'तृणबिन्दु' के आश्रम में रहकर, पास ही एक सुरम्य स्थल में तप करने लगा। देव-मुनि-नाग-राजर्षि-कन्याएं वहाँ आ-आकर पिकनिक मनातीं, गातीं, बजातीं नाचतीं, कूदतीं एवं कौमारसुलभ चञ्चलता से खूब ऊधम मचाती थी।

इससे पुलस्त्य मुनि की साधना में विघ्न पड़ना स्वाभाविक था, मुनि को हर्ष (कामोद्भव) होने लगता। एक दिन मुनि ने उन्हें ललकार कर कह दिया—अरी ओ छोकरियों! तुम यहाँ कोलाहल न मचाया करो, कान खोलकर सुनलो, नहीं तो जो लड़की मेरी नजरों में चढ़ गई उसे कुछ न कुछ हो जाएगा, फिर न कहना।

वे कन्याएं डर गईं, एवं उन्होंने वहाँ आना जाना छोड़ दिया, परन्तु तृणविन्दु की पुत्री बेचारी 'इलबिला' को इस अल्टीमेटम का कुछ पता न था। एक दिन वह सखियों से मिलने इधर आ निकली, वहां उसे कोई सखी-सहेली तो मिली विली नहीं, वह पुलस्त्य मुनि का ब्रह्मघोष सुनकर मधुर सामगान में खोगई।

इधर एकान्त पाकर मुनि ने उस मुग्धा कन्या का कौमार हरण कर डाला। (७।२।१७)

कुछ समय बाद मुनिसुता के शरीर में गर्भज लक्षण उभरने लगे, यह देखकर तृणबिदु ने चकित होकर पुत्री से पूछा अरी! यह क्या हो गया है तुझे? **इलविला** ने विनय पूर्वक सारा वृतान्त कह सुनाया, अब बेचारा तृणबिन्दु क्या करता? विवश होकर उसने वह पुत्री पुलस्त्य मुनि को पत्नीत्वेन अर्पण करदी। वह तो पहलेही चाहता था, तापस मुनि ने 'बाढम्' कहकर स्वीकार कर ली। (टि० १)

श्रीमती नि

...मित्येव स द्विजः।" (७।२।२७)

यथा समय (इस दुर्घटना के २८० दिन बाद) इलविला ने पुत्र जन्मा, क्योंकि श्रुतिश्रवण करती हुई इसे यह प्रसाद मिला था, अतः शिशु का नाम **'विश्रवण'** रक्खा गया।

बालक बड़ा होकर पिता के समान तेजस्वी एवं विद्वान निकला, अथ च सत्यव्रती, शीलवान् स्वाध्याय परायण और विषयानासक्त होकर वह तपस्या में जुट गया। उसके ऐसे गुणों को देख कर महर्षि भरद्वाज ने अपनी **'देववर्णिनी'** नाम्नी पुत्री से उसका विवाह कर दिया।

लंकापति कुबेर

कुछ समय बाद उन के **'कुबेर'** नामी पुत्र उपजा (टि.१) जो संपूर्ण ब्राह्मण गुणों से युक्त होकर 'यक्ष' प्रसिद्ध हुआ। उसने गढ़वाल की 'अलकनंदा' नदी के तटपर 'श्रीनगर' में दुर्गाराधन किया, तपके प्रभाव से कुबेर को **'राजराज'** की पदवी मिली एवं आराध्या भगवती **'राजराजेश्वरी'** कहलाने लगी।

भगवान् शंकर ने 'कुबेर' को मित्र का सम्मान दिया, अथ च उसे चतुर्थ लोकपाल (टि० २) बनाकर 'पुष्पक' विमान दिया, जिस से वह अन्यान्य देवों की तरह गगनविहारी हो गया।

कुबेर के निवासार्थ इन्द्र ने लंकापुरी दे दी एवं कुबेर की अध्यक्षता में हजारों नैर्ऋत वहाँ जा बसे जिससे कुबेर नैर्ऋतराज बनगया। (टि०३)

अब कभी-कभी कुबेर विमान द्वारा लंका से 'मानस सर' पर स्थित अपने माता-पिता को मिलने आया करता था, (७।३।३५)

एकबार सुमाली सुमालिलैण्ड से आकर नवयुवती पुत्री 'पुष्पोत्कटा' के

---

१. कुबेर— कु+वेर=कुष्टी शरीर वाला (वायु पुराणे)

.२ लोकपाल चार हैं :- १. पूर्व का इन्द्र, २. दक्षिण का यम, [illegible] वरुण, ४. उत्तर का कुबेर।

३. नैर्ऋत एक प्रकार के राक्षस होते हैं।

साथ हिमालय में घूम रहाथा, संयोगसे उसने माता-पिता से मिलने आए कुबेर को देखा। उसके ऐश्वर्य को देखकर एवं यह स्मरण करके कि अब यह हमारी लंका का स्वामी है, वह जलभुन गया, अपि च उस के मन में प्रतिशोध की भावना जागृत हो उठी एवं अपनी विवासनजन्य हीन भावना उसे खलने लगी। वह विद्वान् एवं नीति निपुण तो था ही, उसे लंका के ऐश्वर्य को पुनः प्राप्त करने की एक युक्ति सूझ गई, जिसे कार्यान्वित करने के उद्देश्य से उस ने योजनानुसार अपनी पुत्री से कहा :—

"बेटी ! अब तुम व्याहने योग्य हो गई हो, धुरविदेश सुमालिद्वीप में तुम्हारे योग्य संस्कृति वाला वर मिलना कठिन है, अतएव मैं तुझे इधर लाया हूं, यहाँ भी तुम्हारे अलौकिक सौन्दर्य को देख कर कोई युवक (अभ्यर्थना भंग भयेन=) अवधीरणा के भय से तुम्हारा सम्बन्ध माँगने का साहस नहीं कर रहा। हम पितृ भावना से बँधे हुए हैं। पुत्री पर ही (मातृ-पितृ-पति) तीनों कुलों की मान मर्यादा निर्भर होती है। तुम मेरा कहा मानो बेटी ! चुपके से जाकर 'विश्रवण' मुनि से स्वयंवर करलो, देखो तुम्हें कुबेर से भी शक्तिशाली सन्तान प्राप्त होगी। इधर हमारा पितृ कर्तव्य सुचारु रूप से सम्पन्न हो जाएगा।"

पुष्पोत्कटा पिता के अनुरोध से सहमत हो गई। ब्रह्मर्षि 'विश्रवण' मुनि का आश्रम पास ही 'मानस सरोवर' के तट पर था, मुनि सायन्तन आराधना कर रहे थे, पुष्पोत्कटा ने जा कर उनसे स्वयं वर का प्रस्ताव किया, जिसे मुनि ने उसके सौन्दर्य-कुल-यौवन से प्रभावित हो कर सहर्ष स्वीकार कर लिया। (७।९।२८)

ब्रह्मर्षि 'विश्रवण' की पूर्व पत्नी थी भरद्वाज नन्दिनी 'देववर्णिनी', अब सुमालिसुता यवीयसी पत्नी हो गई। महाभारत के अनुसार कुबेर ने अप्रसन्न पिता की आराधना के लिये तीन सुन्दर राक्षसकन्याएँ उपहार भेजी थीं, जिन के नाम थे पुष्पोत्कटा, राका, (दोनों सुमाली सुताएं) मालिनी, (माली की बेटी)।

तीनों राक्षस कुमारियों के विश्रवण मुनि से संतानें हुईं—पुष्पोत्कटा [illegible]र्ण; राका से खर व शूर्पणखा; मालिनी से विभीषण।

[illegible] अस्तु

रावण जन्म

समय पाकर 'पुष्पोत्कटा' को पुत्र जन्मा, विश्रवण मुनि ने ब्राह्मण परम्परानुसार दशवें दिन सूतकान्त होने पर शिशु के नामकरण का आयोजन किया।

कहते हैं कि पिता ने पुत्र को दश मणियों का हार पहनाया, उन दशों मणियों में शिशु का मुख प्रतिबिम्बित हो उठा, यह देख कर पिता ने पुत्र का नाम **'दशानन'** रख दिया। (जैन राम कथा)

पीछे वह बालक संस्कृत भाषा की परिपाटी के अनुसार दशानन, दशमुख, दशास्य, दशवदन, दशकन्धर, दशग्रीव, आदि पर्याय नामों से पुकारा जाने लगा।

इस का यह अर्थ नहीं कि सचमुच ही शिशु के दस मुँह थे। राजा 'दशरथ' के नामकरण पर क्या उस के पास दस रथ थे? ऐसे दशपुर, दशार्ण, दशांगुल, दशबल, दशमाली, दशाश्व, दशामय, दशरात्र, दशहरा, शतघ्नी, शतद्रु, शतायु, चतुर्मुख, पंचानन, षड़ानन आदि अनेक शब्द प्रसिद्ध हैं।

भगवान् शंकर को पंचानन कहा जाता हैं। कोई सिंह पांच मुखों वाला नहीं होता, तथापि उसे पंचानन कहते हैं। क्या सहस्त्रबाहु के हजार भुजाएं थीं? त्रिशिरा: के तीन सिर थे?

क्या भगवान् वेद पुरुष (सहस्रशीर्षा) हजार सिर वाला है? यह मान भी लिया जाए तो उस के सहस्राक्ष नहीं दो हजार आंखें होनी चाहिएं। और क्या वह सहस्रपाद (कान खजूरा) कीड़ा है?

वाल्मीकि रामायण में रावण को अनेकत्र एक सिर व दो भुजाओं वाला लिखा है। दिङ्मात्रं यथा :-

- रावण के 'मुखात्' =एक मुख से (५।१०।...
- रावण का 'आननं' =एक मुख (...

- रावण का 'शिरः' =एक सिर (६।१०७।६४।६५।६६)
- रावण का 'वक्त्रं' =एक मुख (६।१११।३७)
- रावण के 'मुकुटेन' =एक मुकुट से (५।१०।२५) (६।१०६।३)
- रावण के 'नयने' =दो आंखें (५।२२।१८)
- रावण के 'नेत्राभ्याम्' =दो आंखों से (५।४२।२३)
- रावण की 'भुजौ' =दो बाँहें (५।१०।१५) (६।१०६।३)
- रावण के 'बाहू' =दो बांहें (५।१०।२५)
- रावण के 'बाहुभ्याम्' =दो बांहों से (६।४०।१३)
- रावण दिग्विजय में — एक सिर, दो बाहों वाला ही था।
- रावण ने सीता हरण के समय बाएं हाथ से सीता के केश पकड़े तथा दाएं हाथ से टांगें। एवं उस के दो ही हाथ थे।
- रावण को सोए हुए एक सिर दो हाथों वाला हनुमान् ने देखा।
- रावण अशोक वाटिका में सीता से मिलने आया तो वह एक सिर दो हाथ वाला ही था।
- मृत्यु के समय रावण के दो हाथ, एक सिर था।
- दस मुखों वाला—सोता, खाता, बोलता कैसे होगा? क्या ही विचित्र कार्टून है !!!

- दशानन जन्म के कुछ वर्ष बाद 'पुष्पोत्कटा' को दूसरा पुत्र हुआ, बड़े-बड़े गोल-गोल कान होने से उस का नाम कुम्भकर्ण रखा गया। यह बात नहीं कि उस के कानों के साथ घड़े लटक रहे थे।

माली की पुत्री 'मालिनी' से जन्मे पुत्र का नाम 'विभीषण' रखा गया, अर्थात् विशेष भयंकर। शायद उस की जन्म-कुण्डली में कुलान्तक योग हो, जो बाद में यथार्थ निकला।

तदनन्तर 'राका' को खर नामी पुत्र हुआ, फिर एक पुत्री हुई श्रीमती [illegible] 'चन्द्रनखा' रखा। बाद में, नाखून बढ़ा लेने से उस का [illegible] नखों वाली) प्रसिद्ध हो गया।

पांचों बच्चे मानस सरोवर तटवर्ती वैश्रवणाश्रम में पलने लगे। ये सब वेद-वेत्ता, शूर, सदाचारी, विद्या-व्रत स्नातक थे। (टि० १)

दशानन की तपस्या

● ऊपर हम ने देखा है कि कुबेर कभी-कभी माता-पिता को मिलने लंका से कैलाशगिरि की उपत्यका में मानस सर पर आया करता था। अब की बार वह आ कर माता 'देववर्णिनी' के वात्सल्य रस का पान कर रहा था कि सुमाली सुता 'पुष्पोत्कटा' उस के राजकीय ठाठ-बाठ एवं पुष्पक विमान की शान को देख कर सौतिया डाह से जल-भुन गई।

वह अपने पुत्रों की आश्रमानुरूप वेषभूषा देखकर हीन भावना से विह्वल हो उठी एवं कुण्ठा से हतप्रभ हो कर अपने ज्येष्ठ पुत्र दशानन से बोली :-

● बेटा ! देखो अपने सौतेले भाई कुबेर के ऐश्वर्य को, तथा तुलना करो अपनी आश्रमोपलब्ध वेषभूषा से, जब कि तुम्हारा दर्जा बराबर है। तो क्या तुम अपने को इस के समकक्ष नहीं बना सकते ?

दशानन ने विनयपूर्वक कहा — माता जी हम तपोधन ब्राह्मण हैं। हमारे प्रपितामह ब्रह्मा ने तप कर के वेद ज्ञान पाया, सृष्टि की रचना की। फिर पूजनीय दादा पुलस्त्य मुनि ने हिमालय में तप कर के दिव्य विभूति पाई। अथ च

---

१. "पुष्पोत्कटायां जज्ञाते द्वौ सुतौ राक्षसेश्वरौ।
कुम्भकर्ण दशग्रीवौ, बलेनाप्रतिमौ भुवि ॥७॥
मालिनी जनया मास, पुत्र मेकं विभीषणम्।
राकायां मिथुनं जज्ञे, खरः शूर्पणखा तथा ॥८॥
सर्वे वेद विदः शूराः सर्वे सुचरित व्रताः।
ऊषुः पित्रा सह रता गन्धमादन पर्वते ॥" (म...

माननीय पिता विश्रवण ने तप द्वारा इतना प्रभुत्व पाया, एवं आदरणीय ज्येष्ठ भ्राता 'कुबेर' को भी यह ऐश्वर्य तप द्वारा ही तो मिला है। तप ही ब्राह्मण की उन्नति का द्वार है, यही हमारे कुल की परम्परा भी है माता जी !, आप हमें आशीर्वाद दीजिए कि हम भी तपश्चरण में कृतकृत्य हो कर अपने पूर्वजों की तरह सिद्धि पा सकें।

तदनन्तर वे पाँचों भाई-बहन तपश्चर्यार्थ प्रसिद्ध 'गोकर्ण' धाम में आ गए। (७।६।४७) (टि० १)

'गोकर्णनाथ' महातीर्थ में आ कर वे अनेक विध तपश्चर्या में जुट गए। वहां वे वैदिक मर्यादानुसार ग्रीष्म ऋतु में पञ्चाग्नि तप करते, वर्षा ऋतु में खुली जगह मूसलाधार तले वीरासन जमाए हरि भजन करते तथा शिशिर ऋतु में जलाशय के बीच खड़े-खड़े तपस्या करते। (टि० २)

---

१. गोकर्ण आश्रम बम्बई प्रांत के ,कनारा' जिले में ताम्रपर्णी नदी के तट पर है, इसका वर्णन देखो रामकहानी के सीता हरण प्रसंग में।

२. कुम्भकर्ण स्ततो यत्तो नित्यं धर्मपथे स्थितः ।
ततापं ग्रीष्मकाले तु पञ्चाग्नीन् परित स्थितः ।।७।१०।३।।
मेघाम्बु सिक्तो वर्षासु, वीरासन मसेवत ।
नित्यं च शिशरे काले, जलमध्य प्रतिश्रयः ।।४।।
एवं वर्ष सहस्राणि, दश तस्यापचक्रमुः ।
धर्मे प्रयत मानस्य, सत्पथे संस्थितस्य च ।।५।।
पितामहस्तु सुप्रीतः सार्धं देवै रुपस्थितः ।
तव तावद् दशग्रीव ! प्रीतोऽस्मीत्यभ्यभाषत ।।१३।।
शीघ्रं वरय धर्मज्ञ ! वरो यस्तेऽभिकांक्षितः ।
कं ते कामं करोम्यद्य ? न वृथा ते परिश्रमः ।।१४।।

ये वचन मेरे कपोल कल्पित नहीं, महर्षि वाल्मीकि के हैं। ऐसे ऐसे कई प्रमाणपत्र उन्होंने रावण को दिए हैं जिन में इन के सत्य, सरलता, शम, सदाचार [illegible] गुणों का उल्लेख है। (दिङ्मात्रं यथा (५।२०।४६), (५।६।६३,७२,७३), **श्रीमती** [illegible]।११।६६), (३।४६।३२), ७।१४।१४, ७।५।११,

महाभारत के अनुसार इस अनुष्ठान में 'खर' भाईयों की रक्षा करता और 'चन्द्रनखा' इन की शुश्रूषा करती। (३।२७५।१६)

इनके ऐसे "शुद्धाचार-सन्मार्ग प्रवृत्ति" तथा "धर्मनिष्ठा" से प्रसन्न होकर ब्रह्मा आदि देवगण इन्हें वाञ्छित वर दे गए। (७।१०।३- ६)

इस तरह ये पांचों भाई-बहन देवाराधन कर के अपने घर लौट आए। यह देख माता-पिता बहुत प्रसन्न हुए।

कहते हैं कि कुम्भकर्ण को योगाभ्यास की लगन थी। घर आकर रावण ने उसके लिए एक विशेष योगाश्रम बनवा दिया। वह दीर्घकाल तक समाधिस्थ हो कर योगनिद्रा में लीन रहता था। इसी कारण किंवदन्ती प्रख्यात हो गई कि वह छः मास सोता था। विष्णु भी तो शेष शय्या पर योगनिद्रा में सोए रहते हैं।

लंकापति दशानन

अब पुष्पोत्कटा के पिता सुमाली को अपनी योजना सफल होती दिखाई दी, जिस के लिए उस ने अपनी पुत्री का व्याह विश्रवण मुनि से कराया था। वह दशानन के पास आ कर कहने लगा :—

सुनो बेटा ! पहले लंका द्वीप पर हमारा अधिकार था। विष्णु ने हमें वहां से निकाल दिया। अब वह लंका तुम्हारे सौतेले भाई कुबेर के अधिकार में है और हम दर-दर की ठोकरें खाते फिरते हैं।

अथ च तुम अपनी दशा देखो, एक भाई राजा, दूसरा रंक; एक ही परिवार में यह विषमता क्यों ? तुम विद्वान् हो, वीर हो, होनहार हो, समर्थ हो, विद्या-व्रत स्नात हो, लब्धवर हो, हमारे स्वामी हो, तथापि वन-वन की खाक छानते फिरते हो।

लंका द्वीप पर तुम्हारा मातृपक्ष...

कि कुबेर से अपनी लंका वापस लो, लंकापति बनो, मातृपक्ष का उद्धार करो तथा अपने भाई-बहनों की दशा सुधारो, साम-दान-दण्ड-भेद जैसे भी हो। (७।११।४-९)

मातामह का अपदेश सुन कर दशानन ने विनय पूर्वक कहा, पूज्य नाना जी ! आप यह कैसी अधर्म की बात कह रहे हैं, कुबेर तो हमारा पितृतुल्य ज्येष्ठ भ्राता है, गुरु है, आदरणीय है, मैं तो उस के विषय में ऐसी दुर्विनय की बात सोच भी नहीं सकता, मैं तो उस के सामने आँख भी ऊंची नहीं कर सकता। (७।११।१२) (टि० १)

ऐसा मीठा इनकार सुनकर सुमाली अपना सा मुँह लेकर चलागया, पर उसने हिम्मत नहीं हारी, वह निराश नहीं हुआ, उसने अपने ज्येष्ठ पुत्र प्रहस्त को उसके पीछे लगा दिया।

प्रहस्त बड़ा पण्डित-वीर-चतुर एवं वाग्मी था, उस ने मीठी-मीठी बातों से दशानन को बहकाना शुरु किया। वह बोला :-

सुनो दशानन बेटा ! तुम्हें पिता जी को यूँ नहीं कहना चाहिये था, अरे ! सौतेले भाइयों में गुरुत्व कैसा ? विधेयत्व कैसा ? प्रेम कैसा ? सद्भाव कैसा ? देखो तो एक ही कश्यप के भिन्न-भिन्न पत्नियों से कई पुत्र जन्मे, यथा अदिति से आदित्य, दिति से दैत्य, दनु, से दानव, मनु से मानव आदि।

पूर्व सागर मन्थना नन्तर रत्नों के बँटबारे को लेकर इन में दो पक्ष वन गए। एक पक्ष में आदित्य, यक्ष, गन्धर्व, किन्नर, वसु, विद्याधर, सिद्ध, विश्वेदेव, नाग, मानव। तथा दूसरे यक्ष में दैत्य, दानव, राक्षस, भूत, पिशाच, कुछेक नाग, गन्धर्व, और पाश्चात्य यवन (जातियां) कुटुम्ब=कबीले।

श्रीमती [illegible]वो मातामह मुपस्थितम्।
[illegible] मीदृशम् ॥७।११।११॥

समुद्र मन्थन प्रक्रिया में नागराज के नेतृत्व में वीर दैत्य दानव अग्रभाग (=हरावल) में रहे तथा चालाक देवलोक (पुच्छ) पिछले भाग में।

वँटवारे में सुरा (वारुणी) आदित्यों के हिस्से में आई, उन्होंने पी और खूब पी, अतः वे **'सुर'** कहलाए। दूसरे पक्ष ने शुक्राचार्य के नेतृत्व में सुरा का परित्याग किया, अतः वे **'असुर'** कहे जाने लगे। (टि० १)

सुरा के वदले अमृत असुरों के भाग में आया, सुर 'मोहिनी माया' से उसे भी हथिया ले गए। 'पूर्व देव' असुरों को 'देव' पद से भी वञ्चित कर दिया गया।

ऐरावत हाथी, उच्चैःश्रवा अश्व, लक्ष्मी, अप्सराएँ, धन्वन्तरि आदि सारे के सारे रत्न सुर ले उड़े, हालांकि समुद्र मंथन में सुर, असुर, नाग तीनों ने परिश्रम किया था। अमृतपान के समय दूर्वा पर गिरे हुए अमृत को चाटने से वेचारे नागों की जिह्वाएँ भी कट कर द्विधा हो गईं, जिनके माध्यम ने नेतृत्व किया था। (टि० २)

फलस्वरूप युद्ध अवश्यंभावी हो गया, वह छिड़ा तो आज तक देवासुर संग्राम का अन्त नहीं हुआ। असुरों ने वीरता से विजय पाई और सुरों ने दैवी माया से उसे पराजय में बदल दिया।

सुनो वीर दशानन ! यह संघर्ष तो चिरकाल से चला आ रहा है, एक तुम्हें ही यह अनोखी वात नहीं करनी है। और फिर सोचो तो सही,

---

१. "दितेः पुत्रा न तां राम ! जगृहु र्वरुणात्मजाम्।
अदिते स्तु सुता वीर ! जगृहु स्ता मनिन्दिताम् ॥३७॥
असुरा स्तेन दैतेयाः सुरा स्तेना दितेः सुताः।
हृष्टाः प्रमुदिता श्चासन् वारुणी ग्रहणात् सुराः ॥३८॥" (१।४[illegible]

२. नेतापन, या मथने का 'नेत्रा'।

कि लंका सर्वप्रथम हमारी थी, यदि अपनी चीज़ हम शत्रु से वापस लेते हैं, तो इसमें बुराई क्या है ? अनधिकार चेष्टा कहां है ? जो **व्यक्ति समर्थ होते हुए भी छीनी हुई वस्तु वापस नहीं लेता वह नीच है, कायर है।**

लंकापति रावण

कुछ देर सोचने के अनन्तर प्रहस्त का व्याख्यान दशानन की समझ में आ गया, (७।११।२०) और प्रहस्त दशानन को लेकर लंका की ओर चल दिया, एवं सुवेल गिरि पर उन्होंने अपना कैम्प लगा लिया। अथ च प्रहस्त स्वयं निसृष्टार्थ दूत बनकर कुबेर की राजसभा में जा उपस्थित हुआ।

प्रहस्त ने **(दूतवाक्यं)** कहना शुरू किया :—मान्यवर ! नैर्ऋत-राज ! मैं आपके सौतेले भाई दशानन का दूत बन कर आया हूं, मुझे आदेश हुआ है कि मैं आपको विज्ञापित करूं कि यह लंका हमारे मातामहों की थी, जो कि बलात् छीन ली गई है, **छीनी हुई वस्तु पर अपहर्ता का कोई नैतिक अधिकार नहीं हो जाता श्रीमन् !**

अत: हमारा अनुरोध है कि हमारी सम्पत्ति हमें लौटा दी जाय, वर्ना परिणामों का उत्तरदायित्व आप पर होगा। (७।११।३०)

कुबेर ने उत्तर में कहला भेजा कि प्यारे ! छुट भइया ! तुम यह क्या कह रहे हो ? तुम मेरे भाई हो, हमारी सारी सम्पत्ति अविभक्त है, हमारा संयुक्त परिवार है, लंका पर भी हमारा समान अधिकार है। यह खाली पड़ी थी, पिताजी ने मुझे दिलवा दी, आओ हम इस का मिल कर उपभोग करें।

पर दशानन यह सुमन्त्र क्योंकर मानता ? उस पर तो प्रहस्त का **श्रीमती** [illegible] चुका था, उस पर वह गुरुघण्टाल बीच में संदेश वाहक

दशानन अब बड़े भाई का विधेय नहीं, स्वयं सर्वोपरि, सर्वतन्त्र, स्वतन्त्र शासक बनने के सपने देख रहा था, अर्थात् उपराष्ट्रपति नहीं राष्ट्रपति बनना चाहता था।

कुबेर ने उन्हें वहीं छोड़कर हिमालय में जाकर पिता विश्रवण से कहा—पिता जी ! हमारा भाई दशानन कहता है कि लंका हमारे नाना की है अतः यह हमें लौटा दो, वह 'सहअस्तित्व' वाली भावना मानने को तैय्यार नहीं, अब बताइये मुझे क्या आज्ञा होती है ?

ब्रह्मर्षि विश्रवण ने कहा-बेटा ! यह बात उसने मुझे भी कही थी, मैं ने उसे समझाया-बुझाया, डाँटा-डपटा, पर वह नहीं माना, वह पितामह के लाड़-प्यार से उद्धत हो गया है, विशेषतया उसे मातृपक्षीय राक्षस उकसा रहे हैं, अथ च वह अपने को राक्षस कहता है।

देखो कुबेर ! दशानन से टक्कर लेना तुम्हारे वस की बात नहीं, तुम गृहकलह टालने की भावना से लंका उसे दे दो, मैं तुम्हें देवराज का धनपति (कोषाध्यक्ष) बनवा देता हूं, तुम कैलास पर अलकापुरी में आ बसो, नैर्ऋतराज्य को छोड़ो, यहाँ यक्ष राज्य स्थापित करो, लंका सोने की है तो क्या ? यह वसुंधरा 'रत्न प्रसू' है।

कुबेर पिता का आदेश मान कर लंका से सपरिवार-सामात्य सवाहन कूच कर कैलास पर्वत पर अलकापुरी में आ गया। लंका में फिर रक्तपात विहीन क्रान्ति हो गई। प्रहस्त की सूचना पर दशानन ने लंका के सिंहासन पर अधिकार कर लिया, अथ च अपने बहन भाइयों को भी वहीं पर बुलवा लिया।

मुझे ऐसा लगता है कि इनकी माताएं = 'पुष्पोत्कटा, राका और मालिनी' भी इनके साथ लंका में आ गई होंगी, क्योंकि नवयुवती लड़की चन्द्रणखा (शूर्पणखा) पिता के द्वारा अपनी जाति में व्याही जानी चाहिए थी, न कि दशानन द्वारा दैत्य कुल में। एक बार सीता को लौटाने के लिए दशानन को माता के उपदेश का उल्लेख है। (६।३४।२२)

मालूम होता है कि ज्येष्ठ भ्राता कुबेर

दशानन पर अप्रसन्न हो गया होगा अतः माताएं-पुत्र-पुत्री लंका में आ गये होंगे। (यह मेरी कल्पना मात्र है।)

अब द्वीपान्तरों में भागे हुए 'नाना-नानी-मौसी-मामा-मौसेरे भाई-बहन सब लंका में आ धमके, हजारों राक्षस भी। उनकी साध पूरा हो गई, लंका में फिर राक्षसी डंका बज उठा।

दशानन का राज्याभिषेक कर दिया गया, ताऊ नाना माल्यवान्—प्रधान मन्त्री, अकम्पन सुपार्श्व मामे—सचिव, मारीच—युद्ध मन्त्री, मामा-प्रहस्त-प्रधान सेनापति नियुक्त किये गए।

लंका को **"वैदिक धर्मावलम्बी राक्षसराष्ट्र"** घोषित किया गया, राष्ट्र की रक्षा के लिए पास के द्वीपों में 'आरक्ष' स्थापित किये गए। भारत से सम्भावित आक्रमण को रोकने के लिए दण्डकारण्य के जनस्थान में तथा 'गंगा शोणान्तराल' (जिला आरा) में आरक्ष स्थापित किये गए।

जिनमें जनस्थान के 'आरक्ष' का अध्यक्ष राकानन्दन 'खर', सेनापति 'दूषण', मन्त्री अकम्पन तथा कोटपाल 'त्रिशिरा' नियुक्त किये गए।

उत्तरारक्ष का अध्यक्ष 'सुन्द' नियुक्त हुआ, उसके भाई उपसुन्द को सेनापति बनाया गया।

इन दिनों राका की पुत्री 'चन्द्रणखा (शूर्पणखा) विवाह योग्य युवती हो चुकी थी, उसे 'कालकेयवंशी अश्मक (त्रावणकोर) जनपदाधीश 'विद्युज्जिह्व' से ब्याह दिया गया। (७।१२।२)

एक दिन दशानन दक्षिण भारत के वन में मृगया कर रहा था, कि उसे 'मय' नामी दानव मिला, उसके साथ एक सर्वांग सुन्दरी नव युवती कन्या थी। दशानन ने अपना परिचय देकर उनका परिचय पूछा।

वह बोला—श्रीमन्! मैं मय नामी दानव हूं, यहां पास ही ... की विशाल गुहा में मेरा सर्व सुखद **सौवर्ण भवन** है। **श्रीमती '... मालिनी'** अप्सरा का नाम सुना होगा,

देवों ने प्रसन्न होकर वह मुझे देदी थी । मैं उससे दश वर्ष आनन्द विहार करता रहा, उससे मेरे दो पुत्र एवं एक यह पुत्री हुए, इसका नाम **'मन्दोदरी'** है।

चौदह वर्ष हो चुके 'हेमा' स्वर्ग सिधार गई, मैंने इस मातृहीन बच्ची को बड़ी कठिनता से पाला-पोसा, अब यह युवती हो गई है, सोचता हूं कि कहीं इसके योग्य वर मिल जाय तो इसके हाथ पीले करके मैं पितृ ऋण से छुटकारा पाऊं।

वीरवर ! तुम ऋषि सन्तान हो, सर्वगुण सम्पन्न हो, सुशील हो, विद्वान् हो, युवा हो, लंकापति हो, सुन्दर हो, वरेण्य हो, (टि० १) तुम्हारे जैसा वर और कौन होगा ? कृपया मेरी इस पुत्री को पत्नीत्वेन स्वीकार कर मुझे उऋण करो।

इतना कह कर उस ने मन्दोदरी का हाथ दशानन की ओर बढ़ा दिया, दशानन ने **'गृभ्णामि ते सौभगत्वाय हस्तम्'** कह कर वेद मर्यादानुसार मन्दोदरी का पाणिग्रहण कर लिया।

मय दानव ने (दहेज) दक्षिणा के रूप में एक अमोघ 'शक्ति' दशानन को दी, (जिस से उस ने लक्ष्मण को घायल किया था) समय पर मन्दोदरी से 'मेघनाद' नामी पुत्र-रत्न उत्पन्न हुआ, जिसे 'इन्द्रजित्' पदवीं मिली। कहते हैं कि दशानन की दूसरी पत्नी का नाम 'धान्य मालिनी' था। (५।२२।४२)

नोट : मालूम होता है कि रावण की मन्दोदरी एवं धान्यमालिनी दो ही पत्नियाँ थीं, बहुपत्नी वर्णन अति रंजित लगता है।

---

१. "रूपं वरयते कन्या, माता वित्तं, पिता श्रुतम्।
बान्धवा कुल मिच्छन्ति, मिष्टान्नम् इतरे [illegible]

दशानन ने कुम्भकर्ण का व्याह दैत्यराज 'वलि' की दौहित्री 'वज्रज्वाला' से करवा दिया, जिस से कुम्भ तथा निकुम्भ दो वीर पुत्र जन्मे थे ।

विभीषण का विवाह गन्धर्वराज 'शैलूष' की पुत्री 'सरमा' से हुआ, जिस से 'कला नाम की पुत्री हुई। (टि० १)

दशानन की दिग्विजय

अपने पारिवारिक उत्तरदायित्व से छुट्टी पा कर दशानन ने राज-परम्परानुसार तदंग भूत दिग्विजय करने का संकल्प किया।

कहते हैं कि मातृपक्षीय राक्षसों से परिवारित दशानन का लंका पर आधिपत्य सुनकर कैलास पर बंठे कुबेर के मन में ज्ञातीर्षाजन्य डाह उपजी, उसने कुछ षड्यन्त्र रचने के उद्देश्य से अपना एक दूत लंका में भेजा।

दूत पहले सीधा विभीषण से मिला, उन में कुछ गुप्त मन्त्रणा हुई, तदनन्तर विभीषण ने दूत को दशानन की राजसभा में उपस्थित किया, वहां राजदूत ने दशानन की डाँट-डपट शुरू कर दी। (७।१३।११-४०)

महाभारत में तो यहां तक लिखा है कि विभीषण कुबेर के साथ ही चला गया था, वहां उसे सेनापति बना दिया गया, अतः वहीं से वह लंका युद्ध में सम्मिलित होने आया होगा।

दशानन को कुबेर-विभीषण के षड्यन्त्र का भेद मिल चुका था, एवं उसकी गाली-गलौच भरे श्रुतिकटु भाषण से रुष्ट होकर दशानन ने उसका तलवार से सिर उड़ा दिया। एवं उसने कुबेर को भी दण्ड देने का निश्चय कर लिया।

दिग्विजय की योजनानुसार दशानन ने सर्वप्रथम उत्तर लोकपाल कुबेर पर अभियान की ठानी, एवं वह शुभ मुहूर्त में "वैदिक स्वस्त्ययन" करके गण्य-मान्य राक्षस वीरों के साथ चल पड़ा, इस अभियान में 'मारीच' उसका युद्ध मन्त्री था। कुम्भकर्ण प्रधान सेनापति था।

[illegible]न्धर्वराज = गायनाचार्य, शैलूष = अभिनेता, सरमा = (शायद) श्रीमती [illegible] शब्द साभिप्राय लगते हैं।

सेना नाना वन-नदी-पर्वतों को लांघती हुई कैलास पर्वत पर जा पहुंची, यक्षराजधानी "अलका पुरी" घेर ली गई, यक्षों का राक्षसों से घोर संग्राम छिड़ गया, दशानन की गदा के प्रहार से मूर्छित होकर कुबेर पृथ्वी पर गिर पड़ा, सेनापति उसे उठा कर नन्दन वन ले भागे। राक्षस विजयी हुए, यक्ष पराजित। अलकापुरी लूट ली गई, लूट की अन्यान्य वस्तुओं के साथ "पुष्पक" विमान भी दशानन के हाथ लगा। राजधानी में विजय दुंदुभि बजवा कर दशानन कैलास से उत्तर आया। (७।१६।४३)

कुछ दूर आकर वह 'त्रिशूलि' पर्वत पर चढ़ गया, वहां "शरवण में" शंकर का निवास था, स्कन्द कुमार की जन्म स्थली वही है, उन दिनों शंकर के आदेश से वहां जाना निषिद्ध था। 'नन्दी के रोकने पर भी दशानन ने अस्त्रों के विस्फोटों से पर्वत को प्रकम्पित कर दिया।

उस समय 'चण्डी भवानी' कलहान्तरिता का अभिनय कर रही थी, और अनुकूल नायक = शंकर माना पनयन में असफल हो रहे थे। भूचाल से डर कर गिरिजा का मान भंग हो गया एवं वह शंकर से लिपट गई।

यद्यपि यह दशानन का दुर्विनय था तथापि शंकर के लिये— 'स्वयं गलग्रह' रूपी 'अनुकूलो गलहस्तः' होगया, अतः वे दशानन पर रुष्ट भी हुए, तुष्ट भी, अतएव वे उस पर 'अवग्रह' भी करना चाहते थे 'अनुग्रह' भी।

उन्होंने उसे ऐसा धर दबाया कि वह रो दिया, चिल्ला उठा, लगा 'शिव ताण्डव' स्तोत्र का पाठ करने। शंकर हँस दिए एवं बोले— 'अब क्यों रोता है बच्चू ! बोल क्या चाहता है ?

दशानन भूमि पर हाथ टिकाए हुए बोला — पशुपति नाथ ! यदि आप मुझ पर प्रसन्न हैं तो मुझे "परम शैव" होने का वर दीजिये, मुझे अपना शिष्य स्वीकार कीजिये आशुतोष ! ।

शंकर बोले 'तथास्तु', देख वीर तू अभी अभी [illegible] तूने अपने बल-विक्रम से शत्रुओं को [illegible]

'रावण' रखता हूं, (टि० १) आज से तू इसी नाम से प्रख्यात होगा। जा कार्तिकेय और परशुराम के साथ शस्त्रविद्या का अभ्यास कर एवं यह ले प्रसाद रूप **'चन्द्रहास'** नामी तलवार।

कहते हैं कि यहां दशानन = रावणने 'सारंगी' नामो स्नायु वाद्य का आविष्कार किया, एवं उस के मधुर संगीत से महेश्वर को मुग्ध कर लिया, इस समय गणपति मृदंगं पर इसकी संगति कर रहे थे। तदुक्तम्—

"नान्यद् गीतात् प्रियं लोके देवाना मपि दृश्यते।

शुश्क स्नायु स्वराह्लादात् त्र्यक्ष ं जग्राह रावणः॥ (पंचतन्त्रे)

रावण की बदरीनाथ यात्रा

वहां से चलकर दशानन रावण हिमालय पर आ गया, यहां बिन्दुसर से निकली 'बिन्दुमती' एवं 'अलकनन्दा' नदी के संगम पर **'वैखानस आश्रम'** है, पहले इसे **'उशीरवीज'** क्षेत्र कहते थे, आज कल इसे **'हनुमान् चट्टी'** कहते हैं। और बिन्दुमती को दुग्धगंगा।

नर-नारायण पर्वतों के बीच अलकनन्दा बहती है, नारायण पर्वत पर बदरिकाश्रम है और ५ मील आगे नर पर्वत पर यह 'वैखान साश्रम' है, यहां इतने हवन यज्ञ होते रहे हैं कि आज भी भूमि खोदने पर आपको जले हुए जौं, तिल तथा कोइले मिलेंगे। एवं धनाभाव के कारण युधिष्ठिर ने यहाँ से ब्राह्मणोच्छिष्ट छोड़े हुए स्वर्ण पात्र ले जा कर अश्वमेघयज्ञ किया था। (महाभारत आश्व० ६५।२० (टि०२)

---

१. रावयति शत्रूनिति रावणः।

२. ततः क्रोशद्वये देवि! वैखानसमुनिस्थलम्।
यज्ञभूमि स्तथा तत्र मरुत्तस्य महात्मनः ॥५८॥
अद्यापि तत्प्रदेशे हि यवा दग्धा स्तिला स्तथा।
अंगारा श्चापि दृश्यन्ते होतृस्थाने महात्मनाम्॥ (स्कन्द पुराणे ५६८।५८,५९)
मील गणना वदरीनाथ—हरिद्वार है। क्रोश = २॥ मील है।
...ने ज्येष्ठ पुत्र 'यज्ञदेव' के साथ यहां की (१९५६,५८,५९ में)
श्रीमती ... है।

उस समय यहां राजा मरुत्त 'माहेश्वर' यज्ञ कर रहा था, पुरोहित था बृहस्पति का भाई 'संवर्त'। रावण यज्ञांगन में आ धमका, और मरुत्त से बोला लड़ो या हार मान लो।

मरुत्त तो द्वन्द्व युद्ध के लिये तैयार हो गया पर पुरोहित संवर्त ने कहा कि दीक्षित पुरुष को सौम्य रहना चाहिये अतः तुम्हें युद्ध के झमेले में पड़ना ठीक नहीं। इस पर राजा मरुत्त ने हार मान कर बला टाल दी। रावण विजय का डंका बजवाता हुआ आगे चल दिया। (७।१८।२-१८)

और पृथ्वी के वीरों को 'लड़ो या हार मान लो' कह कर परास्त करता हुआ घूमने लगा। उसने किसी तथाकथित कोशलेश 'अनरण्य' पर आक्रमण किया, कहते हैं कि राजा डर कर स्त्री वेष बनाए अन्तःपुर में जा छिपा पर रावण ने उसे वहां से निकाल कर मार डाला, राजा का नाम 'नारी कवच' पड़ गया (शायद यह दक्षिण कोशलेश हो)

तदनन्तर रावण ने नारद के परामर्श से दक्षिण विजयार्थ प्रस्थान किया, दक्षिणलोकपाल सूर्यपुत्र 'यम' पहले तो रावण से लड़ा, फ़िर भाग खड़ा हुआ। रावण यमराज को जीत कर एवं अपने नाम का डंका बजवा कर यमपुरी से वापिस आ गया, एवं कालविजयी मृत्युञ्जय की उपाधि पाई। (टि० १)

अब रावण ने पाताल लोक में नागों की राजधानी **'भोगवती'** पर आक्रमण करके नागराज 'वासुकि' को परास्त किया।(७।२३।५)

दक्षिण मणि नगर के आक्रमण में पन्द्रह मास युद्ध चलता रहा,

---

१. किन्विदानीं मथा शक्यं कर्तुं रण गतेन हि,
एष तस्मात् प्रणश्यामि दर्शनादस्य रक्षसः।
इत्युक्त्वा सरथः साश्वः तत्रै वान्तर धीयत ॥ (७।२२।४६)

नोट : ये यम-वरुण दिक्पाल राजा थे, मृत्यु या जल नहीं

किसी भी पक्ष की हार-जीत न हुई, टक्कर बराबर की थी, दोनों पक्ष सधर्मी थे, फिर व्यर्थ युद्ध क्यों ? अत :-

"अविभक्ताश्च सर्वार्था: सुहृदां नात्र संशय:"

की भावना से उनमें अग्निसाक्षिक सन्धि हो गई। (७।२३।२३)

रावण उनके यहां एक वर्ष भर प्रीतिभोज उड़ाता रहा, तथा उसने उनसे सौ प्रकार के सामरिक दाव-पेचों की शिक्षा पाई।

आगे चल कर रावण ने कालकेय राज्य के अश्मक नगर (त्रावणकोर) पर आक्रमण किया। अन्धाधुन्ध घोर युद्ध में अनजाने रावण के हाथों शूर्पणखा का पति विद्युज्जिह्व मारा गया।

पश्चिम के वरुणालय पर आक्रमण में वरुण के पुत्रों से तुमुल युद्ध हुआ, क्योंकि वरुण स्वयं तो ब्रह्मलोक (बरमा) में संगीत सम्मेलन सुनने गया हुआ था। वरुण पुत्र वीरता पूर्वक युद्ध करते हुए क्षत-विक्षत होकर हस्पतालों में भर्ती हो चुके थे, रावण वरुणालय में अपने नाम का जयघोष करवाकर वापस आ गया।

दिग्विजय का पहला दौर समाप्त हुआ, दशानन **'रावण'** बन के घर लौट आया इतने में उसकी नवोढ़ा बहन शूर्पणखा केश बिखेरे रोती बिलखती रावण के आगे धड़ाम से पृथ्वी पर आ गिरी, कारण पूछने पर वह बोली।

भइया ! तुम ने यह क्या किया ? मेरे प्राणनाथ अपने लाडले बहनोई को मार कर मुझे अनाथ विधवा बना डाला, तुम मेरे भाई हो कि शत्रु ? तुझे लज्जा नहीं आती ? अब मैं क्या करूं ? कहां जाऊं ?

रावण अति विस्मित होकर बोला — बेटी ! तुम यह क्या कह रही हो ? मुझे तो कुछ भी पता नहीं, मनुष्य समर में अन्धा एवं पागल हो जाता है, उसे भले बुरे का, अपने पराए का कुछ भी ज्ञान [illegible]रहता, नहीं तो मेरी प्यारी बहन ! मैं अपने बहनोई को क्यों

श्रीमती [illegible]

मुझे क्षमा कर दो देवी ! अब तुम शोक का निग्रह करो, जो होना था हो गया, धैर्य धारण करो, मैं तुम्हें जनस्थान की रानी बनाए देता हूं, वहां तुम्हारा भाई 'खर' तुम्हारी भरकस देख-भाल करेगा, तुम्हें कोई असुविधा न होगी। दूषण वहां बलाध्यक्ष है तथा मामा 'अकम्पन' मन्त्री। चौदह हजार सैनिक हैं। (७।२४।२४-४२)

तदनन्तर रावण **'निकुम्भिला देवी'** के मन्दिर गया, वहां उसने देखा कि शतशः यूपों से सुसज्जित सौम्य देवालयों में महायज्ञ हो रहा है। वहां कृष्णाजिन ओढे, दण्ड-कमण्डलु-शिखा-सूत्र-धारी यज्ञ दीक्षित अपने पुत्र **'मेघनाद'** को देख वह आलिंगन पूर्वक कहने लगा :

बेटा ! यह क्या ? इतनी अल्प आयु में इतनी कठोर साधना क्यों ? मौनव्रती होने से वह तो कुछ न बोला, वहां पुरोहित बने हुए ब्राह्मणशिरोमणि शुक्राचार्य ने कहा-सुनिये राजन् ! मैं बताता हूं, तुम्हारे पुत्र ने तुम्हारे पीछे **वैष्णव-माहेश्वर** सरीखे सात यज्ञ कर डाले हैं, आज यज्ञ की पूर्णाहुति में आप भी भाग लीजिये। (७।२५।१३)

नोट — "राक्षस वैष्णव यज्ञ भी करते थे परन्तु यह वैदिक 'विष्णु' था, ऐतिहासिक नहीं।"

घर जाने पर विभीषण ने सूचना दी कि - भइया ! उधर तुम दूसरे राज्यों में लूट खसूट मचा रहे थे, इधर तुम्हारे घर डाका पड़ गया। सुनिये, यमुना तटवर्ती (शौरसेन राज्याधिपति) मथुरा नरेश 'मधु' दैत्य कुछ दिन हमारा अतिथि रहा, एक दिन वह हमारी मौसेरी बहन **कुम्भीनसी** को ले भागा, उस समय कुंभकर्ण योगनिद्रा में समाधिस्थ था, एवं मेघनाद यज्ञ दीक्षित था।

हम ने इस विचार से उसका पीछा नहीं किया कि — चलो योग्य वर है, लड़की पराया धन होता है, किसी को तो देनी ही थी, और फ़िर इस काण्ड में कुम्भीनसी की भी कुछ-कुछ [illegible] है, जो हुआ सो हुआ।

यह सुन रावण को बड़ा क्रोध आया, वह बोला — कौन होता है वह मधु का बच्चा? उस की यह मज़ाल? उसे यह हिम्मत हुई कैसे? अरे! तुम्हारी 'योग्य वर वाली बात तो वैसो है कि **'चील चपाती ले उड़ी पितरो तोरे निमित्त !'** यह तो सरासर कायरता है, मैं उसे इस शठता का मज़ा चखाऊंगा, मधुपुरी है ही कितनी दूर?

इतना कह कर उस ने सेना को कूच करने का आदेश दे दिया, सेना चल पड़ी, उसके हरावल (अग्रभाग) में मेघनाद, पीछले भाग में 'कुम्भकर्ण' बीच में रावण चल रहा था, विभीषण को लंका की रक्षा का भार सौंपा गया।

नोट — इस से आप जान ही गए होंगे कि कुम्भकर्ण सो नहीं रहा था, जब कि वह राजसभा की हर बैठक में, एवं सभी अभियानों में मुख्य भूमिका निभाता रहा। पता नहीं इन धर्म के ठेकेदारों को बेपर की उड़ाने में क्या मज़ा आता है? वा० रा० ७।२५।२४-३५ (टि० १)

भंग भवानी की एक और उड़ान सुनिये, (देखिये :— कल्याण प्रेस मुद्रित वा० रामायण चित्र में) (६।६०।३५-५५) महात्मा कुम्भकर्ण को जगाने के लिये ढोल धौंसे पीटे गए वह नहीं जगा। उसे दस हज़ार क्रूर राक्षसों ने मुक्कों, मुसलों, भालों, गदाओं, शतघ्नियों से मारना शुरू किया पर वह नहीं उठा। कई उसके केश नोचने लगे, कई दान्तों से उस के कान चबा गए पर उसे होश नहीं आई। उस के कानों में सौ घड़े पानी डाला गया, वह टस से मस न हुआ। उसके शरीर पर घोड़े, गधें, ऊँट चढ़ाए वे भी उसकी निद्रा भंग न कर सके। अन्ततोगत्वा कुम्भकर्ण के शरीर पर एक हजार हाथी दौड़ाए गए (खटमल होंगे) तब कहीं जाकर उसकी नींद टूटी। (६०।३५-५५)

श्रीमतो [illegible]ः सैन्यात् सैनिकान् परिगृह्य च ॥ ३४ ॥
[illegible] कुम्भकर्णश्च पृष्ठतः ॥ ३५ ॥

एक किंवदन्ती सुनिये—जगने पर उसका छः माही क्षौरकर्म होने लगा, नाक के बाल नोचते हुए नाई का 'मोचना' हाथ से छूटकर कुम्भकर्ण के नाक में गिर गया, अपने शस्त्रनाश से उसे उद्विग्न देखकर कुम्भकर्ण ने कहा—रोता क्यों है रे! नउए? जा नाक में घुस कर अपना मोचना ढूँढ ला, नाई नाक में घुस कर मोचना ढूँढने लगा कि उसे वहां एक घुमार मिला जो सोए हुए कुंभकर्ण के नाक में घुसे हुए अपने गधे को आठ दिन से ढूँढता भटक रहा था। दोनों नाक के बाहर निराश निकल आए। यह चुटकुला मैंने सत्तर वर्ष हुए सुना था इति।

● पड़ाव पर पड़ाव मारती हुई सेना यमुना के तटवर्ती मधुपुरी में प्रविष्ट हो गई किसी ने भी प्रतिरोध नहीं किया, प्रत्युत 'मधु' डर कर अन्त:पुर में जा छिपा, रावण सीधा उसके प्रासाद में जा धमका, परन्तु वहां भी उसे मधु नहीं मिला।

इतने में इनकी मौसेरी बहन 'कुम्भीनसी' हाथ जोड़े रावण के चरणों में आ गिरी, रावण ने उसे उठा कर गले लगाया, प्यार किया, आश्वासन दिया, अभय दान दिया।

वह बोली—भाइया! जो होना था, हो गया, अब मधु मेरा पति है, वह वीर है, शैव है, ब्राह्मण्य है, विद्वान् है। **आर्य पुत्री के लिये पति ही सर्वस्व होता है। धर्मपरायणा महिला के लिये वैधव्य से बढ़ कर कोई दुःख नहीं होता भाई मेरे!** मधु का दुर्विनय क्षमा कर दो वीर!, अब वह तुम्हारा सम्बन्धी है, उसकी ढिठाई को भूल जाओ, मेरी ओर देखो, उसे प्राणदान दे दो भइया!

रावण कुम्भीनसी की धर्मभावना से बहुत प्रभावित हुआ, उस का हृदय द्रवित हो गया, मन्यु जाता रहा, वह प्रसन्न होकर बोला :— अच्छा जीजी! जीजा जो को बाहर तो निकालो, [illegible] मुझे खुशी है, मैंने उसे क्षमा किया, अब [illegible]

मित्र है, सहयोगी है। मैं उसे साथ लेकर स्वर्ग पर अभियान करना चाहता हूं।

'कुम्भीनसी' अन्दर गई, वहां पलंग के नीचे श्वास की आहट रोके छिपे हुए पतिदेव से बोली, उठो वीरवर ! साहसी ! निकल आओ वाहर तुम्हारा साला बाहें फैलाए तुम्हें गले लगाने को उतावला हो रहा है, उस से मिलो।

अब मधु यथान्याय रावण से मिला, मधु ने मधुपर्क से उस का आतिथ्य किया, एवं रावण दलबल सहित एक रात्रि वहां रहा, दूसरे दिन वह मधु को साथ लेकर स्वर्ग की ओर चल पड़ा। 'त्रिविष्टप' जाते जाते—कैलास पर सेना का पड़ाव पड़ा। कुवेर के 'चैत्ररथ' नामी गृहोद्यान में रावण का शिविर लग गया।

अब मधु १ मास था, मधु २ वास था, मधु ३ साथ था, मधु ४हाथ था, (टि०) राका की चाँदनी धवल कैलास पर छिटक रही थी, रसाल-कदम्ब-वकुल आदि वासन्तद्रुम फूल रहे थे। मन्दाकिनी में कुमुदिनियाँ खिल रही थी। मधुमत्त गन्धर्व-किन्नरियां-यक्ष गा बजा रहे थे। अर्थात् चारों ओर **कामराज योजना** का दौर-दौरा था।

ऐसे में एक सर्वांग सुन्दरी षोड़षी धरती पर ठुमुक ठुमुक पद धरती हुई जा रही थी, पायलों की रुन झुन मानो वाद्य का काम दे रही थी। उसके शरीर पर चन्दन चर्चित था, वह सोलह श्रृंगार किये थी, नीली चूनरी ओढ़े थी, ऐसे में मुनियों का भी मन चंचल हो उठे।

रसिक-शिरोमणि रावण ने उसपर हाथ डाल दिया एवं मधुर स्वर में बोला, ओ सुर-सुन्दरी ! किधर जा रही हो मन्दाकिनी ! आज इस निशीथ में किसके भाग्यभानु का उदय होने जा रहा है ? आज इस अनाघ्रात पुष्प को कौन सूँघेगा ? इस सुधारस का पान किसके होंठ

श्रीमती [illegible]

[illegible] ४ सुरा।

करेंगे ? इस मधुर मधु का आस्वाद लेने वाला भ्रमर कौन सा है ?

अरी ! ओ ! प्यारी !

- तुम्हारा यह रूप आँखों के लिये — मधु है।
- तुम्हारीं यह वाणी कानों के लिये — मधु है।
- तुम्हारा स्पर्श शरीर की त्वचा के लिये — मधु है।
- तुम्हारे श्वास की सुरभि वायु नासिका के लिये — मधु है।
- तुम्हारा चिन्तन मन के लिये — मधु है।
- तुम्हारे अधर में चूसने योग्य मुख्य — मधु है।

देखो ! तुम्हारे (षट्पद) छः स्थानों में स्थित भी 'मध' षट्पद (भ्रमर) जन्य नहीं है अतः न यह उनका जूठा है नाही उनके विष से दूषित, दुर्गम भी नहीं, क्या यह मेरा भोज्य, मेरा भोग्य मेरा भोज्य (भुजान्तर योग्य) हो सकता है ? (टि०)

ऐसे रोके जाने पर वह काँपती हुई बोली—महाराज ! आप को ऐसे नहीं कहना चाहिये, आप मेरे गुरुजन हैं।

इस पर रावण ने कहा—अरी ! कौन है तू गुरु की चेली ?

वह बोली—राजन् ! क्षमा कीजिये आप मेरे कनिष्ट श्वशुर हैं, मैं आपकी बहू हूं। मेरा नाम 'रम्भा' है, मैं आप के भतीजे 'नलकूबर की रखेल हूं, इस समय मैं उसी के पास अभिसरण कर रही हूं, वह मेरी प्रतीक्षा कर रहा है, मुझे जानेदीजिये दयालु !

---

१. रूपं नेत्र मधु, ध्वनिः श्रवणयोराह्लाद मूलं मधु,
स्पर्शो गात्रमधु, प्रिये ! तव मधु, श्वासानिलः घ्राणयोः।
ध्यानं ते मनसो मधु, त्वदधरे मुख्यं सुचोष्यं मधु,
नोच्छिष्टं, न च दुर्गमं, न सविषं, तेऽषाट् पदीनं मधु ॥

(क्रमशः

रावण ने कहा—अरी ! यह बहू-बेटी वाला फ़ार्मूला मेरी समझ में नहीं आया, ऐसे पारिवारिक सम्बन्ध तो कुल वधुओं में हुआ करते हैं, बाजारी औरतों में नहीं ।

तुम तो स्ववेंश्या हो, साधारिणी स्त्री हो, तुम्हें सम्बन्ध एवं अनुराग का वास्ता देना जँचता नहीं । यह तो पवित्र पतिव्रताओं की परम्परा है ।

अप्सराएं तो अभी किसी एक की, तो दूसरी घड़ी किसी दूसरे की ।

तुम तो फ़िर अक्षययौवना हो सदा षोड़शी हो, आज दादा की कल पोते की । पुत्र-पोते-नाती एक ही अप्सरा से रमण करें तो कोई अपराध नहीं । (टि० १)

इन्द्र तो तुम्हें अनेक तापसों का व्रतभंग करने भेजता रहता है । (३।४६।४२,४३)

कहते हैं कि अप्सराओं में पति-पत्नी का नियम भी नहीं होता, नाहीं एक पत्नी बन्धन । (रामायण ७।२६।४०) (टि० २)

इन में गम्यागम्य मर्यादा नहीं होती, ये आयु की भी पर्वाह नहीं करतीं, नाही सुरूप-कुरूप का विचार, इन को तो भोगक्षम 'नर' चाहिये । (पञ्चतन्त्रे) ३

वेश्याओं में उभयनिष्ठ रति का तो प्रश्न ही नहीं उठता सुरसुन्दरी ! उन की रति विभावजन्य नहीं होती, उन की रति का

---

१. उर्वशी—पुरोर्वंशे हि ये पुत्रा नप्तारो वा त्विहागताः ।
तपसा, रमयन्त्यस्मा न्नचतेषां व्यतिक्रमः ॥ ४३ ॥

२. पति रप्मरसां नास्ति, न चैक स्त्री परिग्रहः (वा० रा० ७।२६।४०)

[illegible]च्चिद गम्योऽस्ति, न चासां वयसि स्थितिः ।
श्रीमती
[illegible] पुमान् इत्येव भुञ्जते ॥ (पंचतन्त्रे)

आलम्बन कामुक का बटुआ होता है, उन की रति का उद्दीपन होता है, कामुक की वासना का परिमाण। धनी कामुकों को उल्लू बनाने के लिये रति का अभिनय करना मात्र वेश्याओं की कला होती है। तदुक्तम् :—

"मानो रतिः स्नेह सुभाषितानि,
प्रदर्शनार्थं नहि वस्तुतस्तु ।
यत्रापि पुत्रान् जनयन्त्य नूढा,
वेश्यालयः किं? नहि भो सिनेमा" ।।

(इदं मम काव्यामृतधारायाम्)

तदनन्तर रावण ने रम्भोरु 'रम्भा' को बाहुपाश में ऐसा जकड़ा कि 'प्रदोष-निशीथ-प्रत्यूष का कुछ पता ही नहीं चला।

"अविदित गत यामा रात्रि रेव व्यरंसीत्" । (भवभूति)

भ्रमरी सूर्योदय के बाद ही कमलकोरक से छूट सकी। और छूटते ही वह रतिखेदखिन्ना, कामी के गले की प्रमृदित पुष्प माला की तरह, निष्पीडितालक्तकवत्, अमन्दाक्रान्ता इक्षुयष्टि की भान्ति, चिरविश्राम के लिये जाने किधर चली गई ?

नोट : पता नहीं चला कि बलात्कार करने पर भी रावण मरा क्यों नहीं ? वेदवती के शाप का क्या हुआ ?

सुना है कि दूसरे दिन महामना 'नलकूबर' ने चचाजी को वड़ी गालियाँ दी थीं।

नोट : इस काण्ड से कुछेक विचारणीय प्रश्न उठते हैं :
आर्यों का "वेश्यागमन, सुरापान, अगम्यागमन, अनुभयरति, शाप, वर, बलात्कार आदि।"
उन पर सिंहावलोक

- हम ने देखा है शाहजहां को एक सेवक की पुत्री मुमताज के कदमों में फूल बिछाते।
- हम ने सुना है महाराज 'नन्द' को घोड़े की तरह हिनहिनाते।
- हम ने देखा है परम वैयाकरण 'वररुचि' का मुंडा हुआ सिर। (टि० १)
- हम ने रामायण में पढ़ा है कि राम अपने को सीता का गुलाम कहता है। (३।४३।४७)
- हम समान अधिकार आन्दोलन का परिणाम भी देख चुके हैं।
- आज नारी 'देवी' नहीं रही।
- आज 'लेडी फस्ट' उपहास बन गया है।

● आज बेचारी बालाएं, युवतियां, प्रौढ़ाएं गोद में बच्चे उठाए बसों में धक्के खाती हैं, पिसी जाती हैं, परपुरुष स्पर्श का संकोच तो रहा ही नहीं। नौजवान लौंडे सीटों पर डटे रहते हैं, ऊपर से फ़बतियाँ उड़ाते हैं—'अजी ! आज समान अधिकार का ज़माना है।

यह हृदयहीनता की पराकाष्टा है।

वस्तुतः बात यह है कि ;—

- कई बातों में स्त्री पुरुष बराबर हैं।
- किसी जगह स्त्री पूजनीय है।
- कहीं पुरुष का महत्व है।

बस यही सनातन धर्म है। यही आर्य पद्धति है आप देखते ही हैं कि घर में पत्नी पति की सेवा करती है, परन्तु रेल के डब्बे में लालाजी पत्नी के लिए पानी लाने भागते हैं, सामान उठाते हैं।

● अन्धाधुन्ध बराबरी का परिणाम है कि कुमारभृत्या ठीक से

...त्ते, शिरः पर्वणि मुण्डितम् (पंचतंत्रे ४।७।४८)

नहीं हो पाती। मां भी दफ़्तर में पिता भी, वेचारे बच्चे कमीने-दुराचारी सेवकों के अधीन नष्ट हो रहे हैं।

● हम ने देखा है सड़कों पर बेचारे बच्चे भूखे प्यासे बिलख रहे हैं, उधर बैरे-आया परस्पर प्रेमलीला में मस्त हैं, एवं कुलीन बच्चों को गन्दी गालियां दे रहे हैं।

● हमने समझ लिया है कि शिशु निर्माण कोई काम नहीं, पुरुषार्थ है—केवल पैसा कमाओ, होटलों में उड़ाओ, हस्पतालों में मरो।

● हम भूल गए हैं कि बैरम खाँ जैसे योग्य अभिभावक ने अकबर महान् का निर्माण किया था।

● हमें याद ही नहीं कि 'दादा कोणदेव' शिवाजी का निर्माता था।

● कौन जानता है कि राम को बनाने वाला गुरु 'वसिष्ठ' था। वाम देव था।

● आज "शुद्धोऽसि, बुद्धोऽसि०" लोरी देने वाली 'मन्दालसा' की क्या आवश्यकता है? जीजाबाई को क्या जरूरत है?

मैं कहता हूं कि यदि कौशल्या-यशोदा न होती तो राम कृष्ण भी न होते।

किसे पता है मनु के वचन कि "एक माता हज़ार पिताओं से बढ़कर पूज्य होती है।" हमें तो समानता चाहिये। बराबरी चाहे बरबादी ही कर दे। (टि० १)

वेद पुरुष कहता है कि मैं नर द्यौ (आकाश-द्युलोक) हूं तो तूं नारी पृथिवी है। पुरुष का काम है विसर्ग, नारी का काम है ग्रहण, यही तो बलात्कार है, यही प्रकृति नियम है। तदुक्तम्—

बाला-तन्वी-मृदु तनुलता-मत्त मातंगयाता।
भीरुः पुम्भिः चकित हरिणी प्रेक्षणा प्रार्थ्यते स्त्रीः।

व्यूढोरस्कं-मृगपतिबलं-धीरवीरं-युवानं।
शाल प्रांशुं-प्रखर रमणं-क्रूर मिच्छन्ति वामाः॥ (३।३५)

(इदं मम काव्यामृत धारा[illegible])

१. सहस्त्रं तु पितृन् माता गौरवेणातिरिच्यते। (मनु० २।[illegible]

महिला का अनुशासन सुनिये, वह कहती है कि—नारी को सन्तुष्ट करने का एक मात्र मन्त्र है कि :—

बाला, तन्वी, मृदुतनु, रिति त्यज्यताम् अत्र शंका,
दृष्टा काचिद् भ्रमरभरतो मञ्जरी भज्यमाना ?
तस्मादेषा रहसि भवता निर्दयं पीडनीया,
'मन्दाक्रान्ता' विसृजति रसं नेक्षुयष्टी कदाचित् ।।

(विकट नितम्बाया: पद्यमिदम्)

नोट : यदि आप संस्कृत नहीं जानते तो इस पद्य का अर्थ किसी संस्कृतज्ञ से पूछ लीजियेगा, मैं नारी रहस्य भेद नहीं कर सकता ।

● जो मूर्ख वैयात्यं की जगह दया या झिझक से काम लेते हैं, वे 'गलहस्त' की जगह 'गलहस्त' देकर कोठे से धकेल दिये जाते हैं। (टि० १)

● एक धर्मातमा कामुक कामिनी के कपोलाधरों में दान्त गड़ाने से घबरा रहा था कि हमारे सम्प्रदाय में मांस भक्षण निषिद्ध है।

● दूसरा भोलानाथ 'स्पर्शनिमीलिताक्षी' प्रिया को मृत समझ कर भाग खड़ा हुआ था कि कहीं मैं हत्या का अभियुक्त ही न ठहराया जाऊं।

रति रहस्य कहता है कि :—

"अत्यन्ताभिमते ऽपि वस्तुनि विधि र्यासां निषेधात्मक:"।
"अपि विधि मभिधत्ते नेति नेति ब्रुवाणा" ।(इदं मम)

अर्थात्—स्त्री 'न' कहे तो 'हां' समझो, नहीं तो तुम्हें कामभाषाऽनभिज्ञ निरक्षरभट्टाचार्य समझा जाएगा।

कण्ठग्रह = आलिंगन । गलहस्त = गलहत्था ।

कालिदास भी कहता है कि :—

"अप्यौत्सुक्ये महति दयित प्रार्थनासु प्रतीपा:"

अर्थात्—सम्भोग की उत्कण्ठा होने पर भी स्त्री पुरुष की संगम प्रार्थना को अस्वीकार कर देती है। अपने मुख से रति प्रार्थना तो दूर रही, चाहे वह चिरपरिणीता भी हो।

स्त्री ऐसा प्रकट करती है कि वह तो संभोग चाहती ही नहीं, पुरुष के विवश करने पर उसे यह अत्याचार सहना पड़ता है। पुरुष बड़े जिद्दी एवं निष्ठुर होते हैं। स्त्री में चाहे पुरुष की अपेक्षा **'कामश्चाष्ट गुण:'** हो, पर उसे लाज दबाए रखती है।

● ये सारी बातें अनुभवगम्य हैं, सोचो तो सही यदि नारी (अर्जुनोर्वशीवत्) संगम की प्रार्थना करे और पुरुप असमर्थता प्रकट कर दे (इनकार कर दे) तो क्या हो ?

● कुछ ऐसे भी जातिसुधारकंमन्य मूर्ख पाए जाते हैं जो न्याय के नाम पर स्त्रियों के लिए पुरुषों के बराबर अधिकार दिलाने को अपीलें करके समाज सेवी बनने का ढोंग रचाते हैं, अखबारों में, जन-सभाओं में, रेड़िओ पर, टी०वी० पर, ऐसे वक्तव्य प्रसारित कर के अपनी प्रसिद्धि का जाल बुनते हैं।

वस्तुत: वे जानते हैं कि 'नारी के सामने बड़े-बड़े मेधावी एवं शूरवीर भी भीगी बिल्ली बन जाते हैं, नर, पशु, पक्षी, सभी। (टि० १)

● हम ने देखा है जगद्विजयी सिकन्दर को 'हेलेन' के तलवे चाटते।

● हम ने सुना है सम्राट् अकबर का लाडला बेटा एक कनीज़ के लिए पितृद्रोह पर उतारू हो गया था।

---

१. "मेधाविनश्च पुरुषा: समरेपु शूरा:,
स्त्री सन्निधौ परम कापुरुषा भवन्ति ॥" (पंचतन्त्रे)

(सिंहावलोकन)

बलात्कार

एक संस्कृत गोष्ठी में एक देवी ने कह डाला कि नर बलात्कार करते हैं, मैं उस देवी को वैयक्तिक रूप से जानता था, वह शास्त्री थी, एम्०ए० थी, एवं स्वाध्यायशीला थी, मैं उसकी योग्यता तथा तीक्ष्णबुद्धि का कायल था।

उस के उपर्युक्त वचन मुझे असमञ्जस लगे, तब मैंने उसे इतना ही कहा कि आप का यह आरोप तथ्य पर आधारित नहीं है, अब यहां इस के प्रतिवाद का न समय है न स्थान, आप कभी इस विषय पर मुझ से विचार विनिमय कर सकती हैं।

उस समय वह देवी कँवारी थी, अर्थात् व्यवहारतः अनुभवहीन, आज वह एक सम्भ्रान्त महिला है, उदारव्यक्तित्व वाली। परन्तु अब मुझे साहस नहीं होता उसे पूछने का, कि क्या वह अब भी वही ठीक समझती है ?।

● रति रहस्य के विवेचक जानते हैं कि—वास्तविक बलात्कार तो नारियों की ओर से ही होता है पर मम्मट के निर्देशानुसार "कान्तासम्मिततया"। काम शास्त्रकार कहते हैं कि :

"आदौ वाच्यः स्त्रिया रागः, पश्चात् पुंसस्तदिङ्गितैः"।

मेघदूत का यक्ष भी कहता है कि :—

"स्त्रीणाम् आद्यं प्रणयवचनं विभ्रमो हि प्रियेषु"

अर्थात्—स्त्रियां अपने रूप-शृंगारसज्जा-हाव-भाव-वचनों के अचूक अस्त्रों द्वारा पुरुष पर करारे प्रहार करती हैं जिन से उन्मत्त

होकर वह न जाने क्या-क्या बकता व करता है। वह पागल, प्रेमिका की मांग भरने के लिए आसमान के तारे तोड़ लाने को तैयार हो जाता है। उसे रेशमी ? अंधेरे में प्राणेश्वरी के रेशमी ? पायल की झनकार का अनहद सुनाई देता है। तदुक्तम् :—

"किमस्त्र शस्त्रै स्तव कार्यमार्ये !
या दृष्टि मात्रेण भिनत्सि लक्ष्यम् ।" **(इदं मम)**

अर्थात्— तुझे क्या काम है तलवार से तीरों से खंजर से ।
नज़र भरके जिसे तुम देखलो, वह खुद ही मर जाए ॥

देवीदास दशरथ जैसा बूढ़ा कामी अवध्यवध करने को, रंक को राव बनाने के लिये, एवं वध्य की मुक्ति के लिये तैयार हो जाता है, यहां तक कि राम जैसे लोकप्रिय निरपराध पुत्र को मृत्यु के मुख में धकेल देता है। और स्वयं **'प्राण जाएं पर वचन न जाएं'** को सार्थक कर जाता है।

हमने उच्च विदुषो, एवं चोटी की समाज सेविकाओं के (तर्कशरूपी) पर्स में कंघी-शीशा, लिप्स्टिक, नेलपालिश, पौडर, सुर्खी आदि (अक्षय तीर) भरे देखे हैं।

अच्छी पढ़ी लिखी युवती तथा प्रौढ़ महिलाओं के कान-गले-हाथों में भूषण चमकते देखे हैं, आखिर क्यों ? ।

यह सब पुरुष पर स्त्रीकृत बलात्कार प्रयोग ही तो है, भेद केवल वाच्य-व्यंग्य में प्रत्यक्ष परोक्ष में है।

कामशस्त्र के रति रहस्य का मूर्तरूप 'बलात्कार' ही है, यह स्वाभाविक भी है, फिर वह पुरुषकर्तृक हो या स्त्रीकृत।

● साहित्यिक भाषा में जिसे बलात्कार कहा जा[illegible] जगत् के लिये 'अनुकूलो गलहस्तः' होता है। [illegible] [illegible]ाणकों

यही रावण के एक मन्त्री का मत था—

"बलात् कुक्कुट वृत्तेन प्रवर्तस्व महाबल ।
आक्रम्या क्रम्य सीतां वै भुंक्ष्व च रमयस्व च ।।
(६।१३।४ वा० रा०)

आर्यों का वेश्यागमन

वेश्यागमन की हानियों को मैं समझता हूं यद्यपि पूर्णरूपेण तद्-विषयक ज्ञान का मैं दावा नहीं करता, क्योंकि मुझे इसका लेशमात्र भी साक्षात् (वैयक्तिक) अनुभव नहीं है। इस शास्त्र की चर्चा महाकवि दण्डी ने अपने 'दशकुमार चरित' नामी उपन्यास में की है।

● इतिहास में रण्डी के कोठे की मार से अनेक सम्पन्न परिवारों के 'विल्व मंगल' अपना सद्गृहस्थ जीवन उजाड़ कर 'सूरदास' बन के रह गए हैं।

तथापि इस घातक व्यसन की 'वैधता' में मुझे किञ्चिन्मात्र भी सन्देह नहीं। इस सांक्रामिक रोग का प्रादुर्भाव सागर मन्थन लब्ध रत्नों के रूप में हुआ। उनमें यही रम्भा भी एक रत्न थी।

तदनन्तर तो कई ऋषियों की सन्तानें भी अप्सराएं हो गईं, इनमें स्वनाम धन्या 'उर्वशी' को नारायण ऋषि ने उत्पन्न किया, एवं यह उनके ऊरू की शोभाधायक हुई। यह देवी महर्षि वसिष्ठ की तथा चन्द्रवंश के प्रवर्तक पुरुरवा के पुत्रों की जननी थी।

इन्द्र ने इन अप्सराओं को अपने अखाड़े की शोभाधायक बनाया, तथा वह इन्हें **'सर्वतो गामि' च 'साधकं च'** अस्त्र के रूप में प्रयुक्त करने लगा।

...नेक अप्सरा देवियों ने हमारे कई ऋषि-मुनि-राजाओं के
...थोड़ी देर के लिए ही सही।

● इन्द्र ने प्रसादरूप 'उर्वशी' राजा पुरुरवा को दे दी जिस से चन्द्रवंश चला।

● यही देवी मित्रा वरुणों की गृहलक्ष्मी बनी तो भगवान् 'वसिष्ठ' जन्में।

● यह देवी 'अर्जुन' को भी कृतार्थ करने आई थी, पर उस बटु ने इसे मातृवत् सम्मान दिया।

● मेनका ने विश्वामित्र मुनि से शकुन्तला को जन्म दिया।

● अथ च इसने मुद्गल मुनि से दिवोदास पुत्र एवं अहल्या पुत्री पैदा किये।

● 'हेमा मालिनी' दस वर्ष 'मयदानव की पत्नी के रूप में रही और दो पुत्र एवं मन्दोदरी पुत्री की 'मां' बनी, जो रावण की पत्नी थी।

● हनुमान् की माता अञ्जना केसरी से विवाह के पहले 'पुञ्जिक स्थला' नाम्नी अप्सरा थी।

हमें चाहते न चाहते भी स्वीकार करना पड़ता है कि हमारे पूर्वजनों को सुरा एवं वेश्या के व्यसन थे। महाभारत काल में तो द्यूत ने भी गुण वृद्धि कर दी थी।

प्रमोद अवसरों में प्रायः रण्डियों के नाच-गान की प्रथा थी, मैंने ये महफ़िलें स्वयं देखीं हैं, ये नगर कीर्तनों के रूप में भी हुआ करती थीं।

दर्शक लोग मदमत्त होकर परस्पर होड़ से रुपये देते जाते, और वे अधिक रुपये देने वालों के आगे भूयो भूयः मुजरा करतीं, जब तक कि उनकी जेब खाली नहीं हो जाती।

● लगे हाथ एक लतीफ़ा भी सुनलीजिये—एक व्यक्ति ने वन में पुरीषोत्सर्ग करते समय वृक्ष से गिरा बदरीफल खालिया, दैवात् उसी रात नृत्योत्सव में नर्तकी का गेय 'टप्पा' था :—

"तेरे दिल का भेद बता दूंगी...." [illegible] पण

सुरा की मस्ती में इस व्यक्ति को लगा कि [illegible] ...राणिकों

बेर खाते हुए मुझे देख लिया है, यह कहीं भरी सभा में मेरा भाण्डा ही न फोड़ दे, इस डर से वह उसे रुपये देता गया, वेश्या ने समझा कि यह मेरे रूप-यौवन-हाव-भाव-गीत-पर रीझ गया है, वह वार-वार इस के सामने बैठ कर वही 'टप्पा' दोहराती।

यहां तक कि भडुवे की जेब खाली होगई, वेश्या फिर आकर गुहराने लगी कि "तेरे दिल का भेद बता दूंगी" अब वह तमक कर बोला—जा साली! बताती है तो बता दे, शौच करते हुए मैंने 'बेर' ही तो खाया था न।

● वेश्याएं दो मार्गों से युवकों को उल्लू बनाती हैं—महफ़िलों में नाच-गा कर एवं एकान्त में यौन-वासना पूर्ति करके, द्विधा ही पुरुषों की चारित्र्य हानि होती है।

● रामायण में कई स्थलों पर वेश्या नृत्य एवं गन्धर्व-किन्नरियों के संगीत समारोहों की चर्चा है, यहां तक कि परम पुनीत तीर्थराज प्रयाग में जान्हवी तट पर महर्षि भरद्वाज ने ऐसी महफ़िलों का आयोजन करके शोकातुर दाशरथियों के विनोद का सफल प्रयत्न किया था।

इन सभाओं में 'अलम्बुषा एवं मिश्रकेशी सरीखी प्रधान अप्साओं ने भाग लिया था। मदमत्त सैनिक कहने लगे — कि हम ऐसी महफ़िलें छोड़ कर न राम को ढूंढ़ने जाएंगे, न अयोध्या लौटेंगे। हमें न भरत की पर्वाह है न राम की चिन्ता। (टि० १)

राम के राज्याभिषेकोत्सव में भी गीत-वादित्र-नृत्य महफ़िलें साग्रमास (४० दिन) चलती रहीं। (७।३६।२७) (टि० २)।

कई कलकण्ठी ललनाएं केवल गाने का व्यवसाय करती थीं, यथा किन्नरियां। कई नृत्य-गीत करती थीं, जैसे त्रिविष्टप की अप्सराएं,

---

१ नैवा योध्यां गमिष्यामो, न गमिष्याम दण्डकान्।
कुशलं भरतस्यास्तु, रामस्या स्तु तथा सुखम्॥ (२।९१।५९)।

२. उपान्नृत्यंत राजानं, नृत्य-गीत विशारदाः।
...संघाश्च किन्नरी परिवारिताः॥
... स्त्रियः पानवशंगताः॥ (७।४२।२१)

कई नाटकों में अभिनय भी करती थीं, यथा भरत नाट्यं के 'लक्ष्मी-स्वयंवर' नाटक में लक्ष्मी की भूमिका निभाती 'हुई उर्वशी' ने 'नारायण' के स्थान पर 'पुरुरव' को वरने की घोषणा कर दी, जिस से सूत्रधार भरतमुनिका सारा प्रयास मिट्टी में मिल गया।

एक ऐसा भी समय आया कि लोगों में इस प्रथा के विरुद्ध आवाज़ उठी :—

परिपूरन पाप के कारण से भगवन्त कथा न रुचे जिनको,
इक नारि बुलाय नचावत हैं, नहि आवत लाज-जरा तिनको।
मिरदंग कहे धिक् है धिक् है, करताल कहे किन को किन को,
तब हाथ उठाय कहे गणिका--इनको, इनको, इनको, इनको।।

मेरे सामने वेश्या नृत्य के विरुद्ध एक प्रभावी आन्दोलन छिड़ा, एवं यह व्यसन रूपी कुप्रथा आर्यसमाज में से सर्वथा लुप्त होगई, परन्तु अब सिनेमा के माध्यम से कला के नाम पर इसने फिर ऐ..ा सिर उठाया है कि पिछले सारे रिकार्ड तोड़ के रख दिये हैं।

अब यह रोग वेश्यालयों से निकलकर भद्रालयों में आ बसा है, इस के कीटाणुओं से अधिक्षिप्त अच्छे भले महाशय अपनी पुत्रियों को सर्व समक्ष नचवाते हैं, एवं नग्न नर्तकियों को अपनी बहुएं बनाते गर्व का अनुभव करते हैं। इति श्रीः।

● प्रातःकृत्य से निवृत्त होकर रावण की सेना ने त्रिविष्टप (तिब्बत) की ओर प्रस्थान कर दिया।

● कहते हैं कि इन्द्र के (गुप्त चर रूपी) सहस्र नेत्र थे, उन्होंने समय पर इन्द्र को रावण के आक्रमण की सूचना दे दी, महेन्द्र भागा भागा उपेन्द्र के पास फर्याद लेकर गया, पर उसे 'रावण से' टक्कर लेने का साहस न हुआ, एवं इन्द्र को साफ़ इनकार कर दिया।

● इन्द्र अपना सा मुंह लेकर अपने स्वर्ग में आ गया, एवं विश्वकर्मा निर्मित अमरावती दुर्ग के कपाट बन्द करके उस ने यथा[illegible] वर्ण के साथ मोर्चे सम्भाल लिये।

[illegible]राणिकों

● कहते हैं कि उस समय ऐसा लगता था कि जैसे अमरावती ने रावण से डर कर आंखें मीचली हों। (टि० १)

● यह वही इन्द्र है जो दोनों जहां का मालिक था। (टि० २)

● जिस के विना कोई यज्ञीय धाम पावन नहीं हाता था। (टि० ३)

● जिस के बल विक्रम की गाथाएं गाई जाती थीं। (टि० ४)

● वह आज सहमा हुआ घर में छिपा वैठा है। सच है :—

जो शासक विलासी हो जाता है, उस की, एवं प्रजा की ऐसी ही दुर्गति होती है।

● रावण ने अमरावती को घेर लिया, एवं देव—राक्षसों में घोर संग्राम छिड़ गया। युद्ध में सावित्र वसु के हाथों रावण का मातामह 'सुमाली' मारा गया (७।२७।५१)।

अब 'मेघनाद' लड़ने को आगे बढ़ा, इन्द्र का पुत्र 'जयन्त' इस से आ भिड़ा, दोनों पक्ष कुमारों का द्वन्द्व युद्ध देखने लगे। घोर संग्राम में जयन्त के प्राणों का संशय देख उसका नाना 'पुलोमा' उसे ले भागा, एवं उसे किसी द्वीप में जा छिपाया। देवगण जयन्त को मारा गया जान कर भाग खड़े हुए। (७।२८।१९,२०)

● कहते हैं कि इस युद्ध में रावण के ९० प्रतिशत योधा मारे गए, तथापि रावण शेष सैनिकों को लेकर लड़ता रहा। अब इन्द्र स्वयं रणभूमि में आ डटा, यह देख कर रावण भी मेघनाद को पीछे हटा कर इन्द्र से भिड़ गया। वह साहस करके वामावर्त से सेना के पिछले भाग का कदन करने लगा, इन्द्र ने दक्षिणावर्त से उसे जा घेरा। यह देख कर राक्षस सेना में हाहाकार मच गया।

---

१. "ससम्भ्रमेन्द्रद्रुत पातिता र्गला,
निमीलिताक्षीव भिया ऽमरावती"। (मेण्ठः हयग्रीव वधे)

२. "इन्द्रो दिव इन्द्र ईशे पृथिव्याः"। ऋक् (८।४।१५।५)

[illegible] ऋते पवते धाम किञ्चन। ऋक् (७।२।२२।१)

[illegible] प्रवोचं यानि चकार प्रथमानि वज्री।" (१।२।३६।१)

इतने में मेघनाद पिता की सहायता को आ पहुंचा, उसने रावण से लड़ते हुए इन्द्र को धर दवाया। इन्द्र दोहरी मार न सह सका एवं थकावट से शिथिल हो गया। इतने में मेघनाद ने नागपाश से इन्द्र को बन्दी बना लिया।

दोनों ओर के वीर मेघनाद के रण-कौशल की मुक्तकण्ठ से प्रशंसा करने लगे। मेघनाद द्वारा इन्द्र के बन्दी हो जाने से देवसेना के छक्के छूट गए और वह भाग खड़ी हुई।

स्वर्ग में रावण की विजय का डंका बज गया। अमरावती लूट ली गई। लूट का माल और इन्द्र को लेकर राक्षस वीर लंका में आ गए, एवं इन्द्र को कारागार में डाल दिया गया। (७।१८।४२)

● कुछ समय बाद देवों का प्रतिनिधि-मण्डल ब्रह्मा के नेतृत्व में लंका में आया, ब्रह्मा ने रावण की तथा विशेषतया मेघनाद की भूरी-भूरी प्रशंसा की एवं उसे 'इन्द्रजित्' की पदवी से विभूषित किया। अथ च देवराज को मुक्त करने का अनुरोध किया।

रावण ने पितामह का अनुरोध शिरोधार्य किया, परन्तु मेघनाद ने फ़िरौती के रूप में विभावसु के अश्वसहित रथ की मांग की, जिसे स्वीकार कर लिया गया, एवं इन्द्र को मुक्ति हो गई। वह आत्मग्लानि के साथ स्वर्ग की ओर चल दिया, अब पुलोमा भी जयन्त को ले आया।

● ब्रह्मदेव ने इन्द्र की भर्त्सना करते हुए कहा—देखो देवराज! तुम कहां से कहां आ पहुंचे हो, वेदों में तुम्हारे प्राक्तन शौर्य तथा विजय वर्णनों से सूक्त के सूक्त भरे पड़े हैं, और आज तुम्हें एक छोकरा बन्दी बना ले गया।

● तुम राज-धर्म छोड़ कर अहल्या जैसी पर स्त्री के निषिद्ध चौर्यरत की लीला में लिप्त रहते हो, किसी तपस्वी के तपो विघ्नार्थ तोड़ फोड़ में व्यस्त रहते हो।

● तुम भूल गए हो कि त्रिविष्टप का राज्य सभी देव गण राज्यों का अग्रणी है, और तुम गणराज्य के 'राष्ट्रपति' हो, देवराज [illegible] वर्ण

● तुम भूल गए हो कि तुम्हारा 'इन्द्रपद' स्था[illegible] [illegible]राणिकों

● तुम भूल गए हो कि तुम इस पद से कई बार च्युत हो चुके हो। फ़िर भी अपनी प्रतिष्ठा की पर्वाह् नहीं करते। बस, यह उसी का परिणाम है। आशा है कि तुम अपना अगला कर्तव्य समझ गए होगे, अब तुम जाकर वैष्णव यज्ञ करो, जाओ।

● अब रावण ने देव-योनियों को तथा नागों को जीत कर भारत के मानवों को जीतने का उपक्रम किया।

उन दिनों मध्य प्रदेश में नर्मदा नदी के तट पर **'माहिष्मती'** नाम्नी नगरी (इन्दौर से ४० मील) हैहयवंशी 'कार्तवीर्य (सहस्त्रार्जुन) की राजधानी थी। अर्जुन जगद्विख्यात वीर था, रावण ने उसे नीचा दिखाने की ठानी, और वह दलबल सहित उस पर चढ़ दौड़ा।

वहां पहुंचने पर रावण को अर्जुन के मन्त्रियों से ज्ञात हुआ कि अर्जुन राजधानी में उपस्थित नहीं है। एवं उस के आने पर उस से द्वन्द्व युद्ध हो सकता है।

रावण को विन्ध्याचल की गोद में खेलती मेकलकन्या 'नर्मदा' (रेवा) नदी के दिव्य दृश्यों को देखने, तथा उसके सुधासलिल में विहार करने, अथ च नर्मदेश्वर के पूजन का, चिर मनोरथ था।

अतः वहां जाकर उस ने नर्मदा में स्नान विहार किया, तदनन्तर उस की सैकत वेदी में अपने 'यात्रिक' सौवर्ग **शिवलिंग** की स्थापना की सैनिकों ने पुष्पों का पर्वताकार ढेर लगा दिया।

रावण गन्ध पुष्पोपहार से रुद्राभिषेक पूर्वक शिवपूजन करके स्वरचित 'शिवताण्डव' स्त्रोत्र गाने-बजाने लगा, अथ च आनन्द विभोर होकर भुजाएं फैलाए नाचने लगा। (७।३१।४४) टि० १)

यत्र यत्र च याति स्म रावणो राक्षसेश्वरः।
जाम्बूनद मयं लिंगं तत्र तत्र स्म नीयते ॥ (७।३१।४२)

बालुका वेदि मध्येतु तल्लिगं स्थाप्य रावणः।
अर्चयामास गन्धैश्च पुष्पै श्चामृतगन्धिभिः ॥ ४३ ॥

ततः सतामार्तिहरं परं वरं,
वरप्रदं चन्द्रमयूखभूषणम्।
... निशाचरो जगौ,
... न्यतः ॥ ४४ ॥

उसे गुप्तचरों द्वारा ज्ञात हुआ कि माहिष्मती नरेश अर्जुन नातिदूर नर्मदा नदी में स्त्रियों के साथ जलक्रीड़ा कर रहा है। रावण ने झट् उसे जा घेरा।

उसके अंगरक्षक कहने लगे—वाह-वाह लंकापति! तुम ने युद्ध का अच्छा समय ढूढ़ निकाला है, जब कि हैहयराज मदिरा में धुत्त हैं, एवं स्त्रियों के साथ जल केलि कर रहे हैं, और तुम उन से युद्ध की आशा रखते हो। देखो प्यारे! अब क्षमा करो, आज रात यहीं टिक जाओ, यदि युद्ध का इतना ही शौक है तो कल महाराज से दो दो हाथ कर लेना।

परन्तु रावण के न मानने पर वे बोले—ऐ! युयुत्सु! लंकेश! हम जीते जी तो प्रतिरोध करेंगे, आप हमें मार कर ही आगे बढ़ सकते हैं। (टि०)

रावण अर्जुन के पास जाने की ज़िद्द कर रहा था, और अंग-रक्षक उसे रोक रहे थे, इस खींचातानी की सूचना पाते ही अर्जुन का नशा उड़ गया, और वह स्त्रीवर्ग को ठिकाने पहुंचा कर रावण से आ भिड़ा। (७।२२।४०)

नोट—आमोद प्रमोद में मद्य का मद बढ़ता है, और भय-विपत्ति में इस का नशा काफ़ूर हो जाता है। कहते हैं कि शराब नशे को उड़ाने का एक उपाय है: 'चार जूते'।

● लगता है यह युद्ध कोई वैर-मूलक नहीं था, इस से किसी का बध

युद्धस्य कालो विज्ञातः साधु भो साधु रावण। (७।२२।२८)
यः क्षीवं स्त्रीगतं चैव योद्धुमुत्सहसे नृपम्॥
क्षमस्वाद्य दशग्रीव! उष्यतां रजनी त्वया।
युद्धे श्रद्धा तु यद्यस्ति श्व स्तात! समरेऽर्जुनम्॥ ३०॥...
यदि चापि त्वरा तुभ्यंयुद्धतृष्णा समावृत। ...ग वण
निपात्यास्मान् रणे युद्धम् अर्जुनेनो पयास्यसि॥ ३१॥ ...पौराणिकों

अभीष्ट नहीं था, किसी की सम्पत्ति पर अधिकार कर लेने की लालसा भी नहीं थी। यह तो दो देशों की टीमों में खेले जा रहे क्रिकेट मैच जैसा ज्ञात होता है।

● क्योंकि रावण ने माहिष्मती पर आक्रमण नहीं किया, घेरा नहीं डाला, अथ च पुरी में मन्त्रियों की और नदी पर अंगरक्षकों की अपीलों का क्या मतलब? 'हेतात, साधु भो साधु, क्षमस्व,' शब्दों का क्या अर्थ? 'एक रात्रि यहां रुक जाइये' का क्या प्रयोजन?

● ऐसी अपील चार दिक्पालों ने क्यों न कीं? रावणा वरुणालय में कुछ दिन क्यों न रुक गया? जब कि वरुण राजधानी में उपस्थित नहीं था।

● कार्तवीर्य अर्जुन पुलस्त्य मुनि का शिष्य था, एवं उन का बड़ा सम्मान करता था, शिष्य एवं पौत्र में संघर्ष की सूचना पाते ही पुलस्त्य मुनिने आकर उन में अग्नि-साक्षिक मित्रता करवादी रावण अतिथि सत्कार पाकर अपने घर लौट आया।(७।३३।१८

पर वह घर में चुप चाप बैठे नहीं गया, जिस किसी नामी वीर का नाम सुनता उस से जा टकराता, वह चाहे देव हो, दैत्य हो, दानव हो मानव हो, राक्षस हो, कोई हो।

नोट : पता नहीं चलता कि 'दशरथ, जनक, काशीराज, केकयनरेश, कैसे बच गए?

एक बार रावण ने किष्किन्धापुरी (जिला बिलारी, आंध्र प्रदेश) में वहां के राजा 'वाली' को जा ललकारा, वाली के मन्त्री (तारा के भाई) तारने कहा—राक्षसराज! इस समय 'वाली' सन्ध्योपासन करने 'तुंगभद्रा' नदी के तट पर गया हुआ है, जरा ठहरिये अभी आ जाएगा। (७।३४।६) टि०)

पर रावण कब रुकने वाला था? वह तुंगभद्रा के तट पर जा

·· सन्ध्या मन्वास्य रावण !
इदं मुहूर्त मायाति वाली तिष्ठ मुहूर्तकम् ॥ (७।३४।६)
...[illegible]तं दृष्ट्वा सन्ध्योपासन तत्परम् ॥ १२ ॥
...[illegible] पद मव्रजत् ॥ १३ ॥

पहुंचा, जहां वाली खड़ा सूर्योपस्थान के वेदमन्त्र जप रहा था।

रावण के मन में शरारत सूझी कि क्यों न वाली को इसी मुद्रा में चुपचाप पकड़ लिया जाय, वह धीरे-धीरे पाओं की आहट किये विना उसकी ओर लपका। (७।३४।१३)

अचानक वाली ने उसे ताड़ लिया, सामने रखे पूजा दर्पण में रावण का प्रतिबिम्ब जो पड़ रहा था, जैसे कार में लगे शीशे में पीछे से आते हुए यान का। पर वाली रावण का दुराशय जान कर भी घवराया नहीं, पूर्ववत् उपस्थान मन्त्र जपता रहा, परन्तु सावधानी से। (८०)

जब रावण हाथ भर उस से दूर रह गया और वह उसे पकड़ने ही वाला था कि वाली ने उसे फुर्ती से दबोच लिया एवं साधारणतः वेद मन्त्र पढ़ता रहा। उपस्थान शेष हो चुकने के वाद वाली ने रावण को काँख में से छोड़ कर मुस्कुराते हुए कहा—कहो महाशय ! तुम्हारी क्या सेवा की जाये ?

रावण शिकार करने आया था, स्वयं शिकार हो गया, वह विस्मित हो कर बोला—वाह ! वानर राज ! तुम्हारी बुद्धि, गम्भीरता स्फूर्ति, शक्ति कमाल है,

नोट : जिन्हें छिपकर प्रहार करते हुए राम ने व्यर्थ कर दिया।

मैंने तुम्हारा वल विक्रम देख लिया है। मैं तुम जैसे वीर के साथ मित्रता चाहता हूं, आओ हम अग्निसाक्षिक मित्रता करलें, आज से हमारे सर्वार्थ अविभक्त हो जाएं, यहां सांझी कमान स्थापित हो जाय।

वाली के 'तथास्तु' कहने पर दोनों अग्नि परिक्रमा पूर्वक मित्र बन गए, और "राक्षस-वानर भाई-भाई" का नारा आकाश में गूंज उठा। एक दूसरे का हाथ पकड़े वे किष्किन्धा पुरी में प्रविष्ट हुए। रावण एक मास पर्यन्त किष्किन्धा नगरी में प्रीति भोज उड़ाता रहा, तदनन्तर मन्त्री उसे लंका में लिवा ले गए। (७।३४।४४)

इस समय तक गंगा-शोणान्तराल (जिला आरा) वर्ती रावण के उत्तरा रक्षका कटकाध्यक्ष निकुम्भपुत्र 'सुन्द' था, उस का भाई 'उपसुन्द' सेना पति था, सामने मलद-करूष नामी दो जनपदों में ऋषिकटक था [illegible] का वर्ण

वाली मौन मुपस्थितः, जपन्वै नैगमा न्मन्त्रान् तस्थौ [illegible] पौराणिकों

अध्यक्ष महर्षि अगस्त्य था, इन का केन्द्र 'सिद्धाश्रम' था। देव-ऋषियों के षड्यन्त्र से सुन्द-उपसुन्द मारे गए तो इस से उत्तेजित होकर सुन्द की वीर पत्नी सुकेतुसुता 'ताटका' नाम्नी यक्षी ने मलद-करूष नगरों की ईण्ट से ईण्ट बजा दी, ये खण्डहर हो कर रह गए, पर 'सिद्धाश्रम' पर देवर्षियों का ही अधिकार रहा।

हां ताटका ने 'कामाश्रम' से सिद्धाश्रम जाने का मुख्य मार्ग काट डाला, यदि उधर से कोई मनुष्य आ निकलता तो वह काल का ग्रास हो जाता। मुनिजन लम्बा चक्कर काट कर आते जाते। अगस्त्य मुनि दक्षिण की ओर कूच कर गए।

नोट : कहते हैं कि सुन्द-उपसुन्द वन में विहार कर रहे थे कि उन्होंने ऋषियों से भेजी हुई एक मनमोहनी नारी (तिलोत्तमा) को देखा और वे दोनों उसे लेने की होड़ करने लगे, तब मोहिनी बोली कि मेरे लिए तुम दोनों ही वरेण्य हो, अब तुम आपस में फैसला कर लो जो तुम में से अधिक बलवान् सिद्ध होगा मैं उसी की हो जाऊंगी, इस पर वे दोनों लड़ मरे और सुर-सुन्दरी तिलोत्तमा अपने धाम चली गई। (म० भा० १।२११।१६)

यह सुन कर रावण ने ताटका के संरक्षण में सुन्द-ताटका के पुत्र मारीच को वहां का अध्यक्ष बनाभेजा, एवं उपसुन्द के पुत्र 'सुबाहू' को सेना पति नियुक्त कर दिया।

● यहां तक तो 'रावणायन' का 'रामायण' से कोई वास्ता नहीं पड़ा, पर जब राम ने 'विश्वामित्र' के यज्ञानुष्ठान की रक्षा के लिये ताटका-सुबाहू को मार डाला, सेना समाप्त कर दी, मारीच घायल हो कर भाग निकला तथा वह 'आरक्ष' नष्टभ्रष्ट हो गया। तो दोनों उपन्यास परस्पर सम्बद्ध हो गए। तदनन्तर तेरह वर्ष बाद तो शूर्पणखा के विरूपीकरण तथा जनस्थान के विध्वंस से दोनों में एकरूपता आ गई। इस के लिये पढ़िये मेरा अगला उपन्यास।

"राम कहानी"

साक्षरा राक्षसा ख्याता

रक्षका भक्षकाः कथम् ?

राक्षसों को "सज्जन" तथा वैदिकधर्मी प्रतिपादित करने के लिये कुछ युक्तियाँ भी हैं, 'रावणायन' समाप्त करने से पहले जिन का जान लेना उपयोगी होगा।

व्याकरणानुसार 'राक्षस' या 'रक्षस्' शब्द रक्ष् (पालने भ्वा०) धातु से बनते हैं, जिसका अर्थ है रक्षा करना, पालना (देखो अमर कोष रामाश्रमी टीका) (१।१।११)-(१।१।५८)। अर्थात्-रक्षा करने वाला, तो रक्षक भक्षक कैसे बन गए ?

□ यदि 'राक्षस' शब्द का अर्थ दुष्ट होता तो लोग रावण को राक्षस शब्द से सम्बोधित न करते, विशेषतया उस के आत्मीय मित्र बान्धव।

□ विभीषण को राक्षस न कहा जाता, क्यों कि वह तो रामभक्त था।

□ राजा 'नन्द' अपने मन्त्री विद्वान्, सज्जन, ब्राह्मण, 'सुबुद्धि शर्मा' को सम्मानार्थ 'राक्षस' उपाधि न देता। इससे प्रकट होता है कि 'चन्द्रगुप्तमौर्य' कालतक राक्षस शब्द दूषित नहीं हुआ था। जो मुद्रा राक्षस' नाटककार 'विशाखदत्त' के समय तक दूषित हो चुका था 'नन्वर्थतो पि ननु राक्षस ! राक्षसोसीत्युक्तः।

□ देव-दैत्य-दानव-मानव-राक्षसों के परस्पर दाम्पत्य सम्बन्ध होते थे, यथा इन्द्र की पत्नी शची, पुलोमा नामी दानव की पुत्री थी। सुकेश राक्षस की पत्नी देववती गन्धर्व पुत्री। इस के तीन पुत्रों की पत्नियां भी गन्धर्व कन्याएं थीं। सुन्द की पत्नी ताटका यक्षी थी। पौलस्त्य विश्रवा की तीन पत्नियां राक्षसियां थीं। भीम की पत्नी हिडम्बा राक्षसी थी, आदि।

□ लोग स्वेच्छा से 'राक्षस' या 'यक्ष' पद स्वीकार करते थे।

□ राक्षसों के घरों में वेद पाठ, अग्नि होत्र, ब्राह्मण [illegible] माहेश्वर आदि यज्ञ होते थे।

□ माल्यवान्-रावणादि राक्षस मानस सर पर आर्षकुल में जन्मे, पले थे ।राक्षस प्रौढ संस्कृत बोलते थे ।

□ राक्षस वेदाध्ययन, शम, दम, सत्य, आर्जव, पूर्वक तप करते थे ।

□ राक्षसों के वैदिक सोलह संस्कार होते थे ।

□ रावण का पितृ कुल आर्ष था, मातृकुल में सूर्य की पुत्री, एवं दौहित्री व्याही थीं, रावण की नानी वसुमती गन्धर्व पुत्री थी ।

□ मन्दोदरी सीता से कम सुन्दरी नहीं थी ।

□ राक्षसों के नामकरण सरल सरस संस्कृत (तत्सम) शब्दों में होते थे, यथा—रावण, मन्दोदरी, मेघनाद, सुलोचना, चन्द्रहास, (खड्ग) अशोक वाटिका, चन्द्रणखा = शूर्पणखा, कुम्भकर्ण, वज्रज्वाला, विभीषण, सरमा, कला, माल्यवान्, सुमाली, सुकेश, हिरण्य कशिपु:, हिरण्याक्ष, आदि ।

□ एक वर्ग ने वारुणी = सुरा ग्रहण नहीं की वह असुर कहलाया, और दूसरा वर्ग "पीत्वा पीत्वा पुनः पीत्वा" वाले फ़ार्मूले पर आचरण (अमल) करके खूब झूमता था, और सुराको निन्दनीय नहीं समझता था वह 'सुर' कहलाया ।

□ असुर वर्ग को 'पूर्वादेवा:' कहते हैं ।

□ रामाश्वमेध में 'राक्षस' ऋषियों की सुसपर्या करते हैं ।

□ कुबेर एवं रावण आदि ब्राह्मण सन्तान थे, इन के नाम करण यज्ञोपतीत आदि सस्कार ब्राह्मण परम्परानुसार हुए ।

□ एक पितृक होने पर भी "वयं यक्षाम:" के अनुसार कुबेर तो 'यक्ष' कहलाया, 'एवं 'वयं रक्षाम:' के अनुसार 'रावणवन्धु' राक्षस कहे जाने लगे । तो भी रावण को 'पौलस्त्य' तथा 'धनदानुज' कहते हैं ।

[illegible]ण्य होते हुए भी रावण ने क्षात्रधर्म अपनाया, जैसे [illegible] अगस्त्य, द्रोण, अश्वत्थामा, आदि ने ।

रावण का आचार इतना उच्च था कि :— उस ने सीता को अपने अन्तः पुर का दर्शन भी नहीं कराया। उसे विलास-भवन (अशोक होटल) में नही रक्खा, वल्कि अशोक वाटिका के 'तापसाश्रम सन्निभ' पवित्र चैत्य (अग्नि मन्दिर) में रक्खा जो एक प्रमदोद्यान में था।

उसे रात्रि के कामोद्दीपक समय में मिलने नहीं जाता रहा, नाही अकेला अकेले में, प्रत्युत प्रातः पूजा पाठ के अनन्तर अपनी पत्नियों को साथ लेकर।

रावण ने सीता के साथ कभी कोई अशिष्ट व्यवहार नहीं किया, नो चेत् पत्रों में छिप कर बैठा हुआ महावीर जाने क्या कर बैठता ? प्रत्युत उस समय हनुमान् ने रावण की मुक्तकण्ठ से प्रशंसा की है, उसे 'महात्मा' तक कहा है, देखो 'रामकहानी' का वह स्थल। ५।६।७०-७३

अथ च रावण यदि बहन का प्रतिशोध लेने के लिये सीता को व्यंग कर देता या उस का शील भंग कर देता तो क्या होता ? अब तो रावण को मार कर सीता प्राप्ति से अपहरण का प्रतिकार सम्भव हो सका, उस अवस्था में राम क्या कर लेता ? उस का समाधान कैसे होता ? यह मैं एक आँख से देखने वालों को पूछना चाहता हूं।

मैं तो इसे रावण की सद्बुद्धि एवं उदारता मानता हूं। यह बात मैं अपने को रावण भक्त नहीं अपितु 'मर्यादा पुरुषोत्तम' राम का अनन्य भक्त एवं राम दल का भूतपूर्व सैनिक परन्तु वर्तमान पैन्शनर मान कर कह रहा हूं।

□ राक्षसों की संस्कृति पूर्णतया भारतीय थी, धर्म कट्टर वैदिक सनातन धर्म था, लंका में वैदिक धर्म का बोलबाला था, समय-समय पर शुक्राचार्य आदि ब्राह्मण पुरोहित इन के यहां स्वस्त्ययन-यज्ञ-हवन-पूजा-पाठ कराते थे, हनूमान् साक्षी है, जिस ने सम्पूर्ण लंका के घर-घर में ब्रह्मघोष सुने हैं।

□ लंका में वेदपाठी ब्राह्मणों की पूजा होती थी, तथा नाना देवी-देवों के मन्दिर थे। (५।५७।७), (५।४।१३), (५।१८।२,६।८२।२४)

□ रामोपाख्यानों में रावण के चरित्र के विषय में नाना धारणाएं व्यक्त की गई हैं, विशेषतया सीता के सम्बन्ध में :—

□ कहीं रावण सीता के सौन्दर्य पर मुग्ध होकर पापाशय से उसके पाओं पर माथा रगड़ता है तो.—

□ कहीं उसे आद्याशक्ति के रूप में अपनी मुक्ति का साधन मान रहा है।

□ कहीं उसका भोगेच्छुक होते हुए भी शाप के भय से बलात्कार नहीं कर रहा।

□ कहीं पर ऐसा वर्णन है कि :—रावण सस्त्रीक कैलाश की ओर शंकर का दर्शन करने जा रहा था, मार्ग परिश्रम से मन्दोदरी का मिथिला के पास गर्भ प्रसव हो गया, दम्पती नवजात कन्या को खेत में छोड़ कर आगे चल दिये, उसे राजा जनक ने पाला, यह वही कन्या 'सीता' है।

□ कहीं उल्लेख है कि 'वेदवती' नाम्नी ऋषि कन्या ने रावण के धर्षण से दुखी होकर आत्म हत्या कर ली, एवं उसने रावण की मृत्यु के लिये सीता के रूप में जन्म लिया। (७।१७।१-४४)

□ कहते हैं रावण ऋषियों से राज-कर मांगता था, धनाभाव से ऋषियों के रक्त का घड़ा भर लिया गया, उस घड़े को मिथलापुरी परिसर के एक खेत में दबा दिया गया, कालान्तर में उस खेत में हल चलाते हुए राजा जनक के हल की फाल से वह घड़ा फूट गया, जिस में से एक कन्या निकाली, जिस का नाम सीता रक्खा गया।

संक्षेपतः "जितने मुंह उतनी बातें" वाली कहावत के अनुसार कई कथानक प्रचलित हैं।

परन्तु मैंने तो 'योगयुक्तेन चेतसा' रामायण का अनुशीलन करते [illegible] प्रक्षिप्त पाठ तथा परस्पर विरोधी अंशों को छोड़

कर रामायण का स्वाध्याय किया जाय तो ज्ञात होगा कि लंका में ले जाने के वाद रावण ने सीता के साथ कोई अभद्र व्यवहार नहीं किया, ना ही सीता ने रावण के प्रति कोई अशिष्ट वर्ताव, इस का हनूमान् साक्षी है।

□ पञ्चवटी के आश्रम में अपहरण के समय भी रावण ने उतना ही वल प्रयोग किया जितना कि कम से कम आवश्यक था, क्योंकि सीता सहल में तो ले जाई न जा सकती थी।

□ और फिर लंका में रावण को बलात्कार से कौन रोक सकता था? एक मन्त्री ने रावण को सम्मति दी थी कि :—

"बलात् कुक्कुट वृत्तेन प्रवर्तस्व महाबल !
आक्रम्या क्रम्य सीतां वै तां भुँक्ष्व च रमस्व च" ।।६।१३।४।।

पर महात्मा रावण ने ऐसा कुमन्त्र मानने से इन्कार कर दिया।

□ बलात्कार में शाप वाली बात भी नहीं बन पाई, क्योंकि वेदवती से बलात्कार एवं शाप का किस्सा वा० रा० ७।१७ सर्ग में घड़ा गया है. तदनन्तर ७।२४ सर्ग में अनेक कन्याओं, महिलाओं के अपहरण तथा विलाप व शाप का उल्लेख है जबकि ५।६।७० सर्ग में वाल्मीकि मुनि कहते हैं कि रावण ने 'जानकी के अतिरिक्त' किसी स्त्री का बलात् अपहरण नहीं किया।

फिर ७।२६ सर्ग में रावण ने चैत्ररथ उद्यान में 'त्राहिमां गुरुजन !' कहती हुई 'रम्भा' से जो बलात्कार किया तो उसे शाप क्यों न लगा? वह क्यों न मरा?

□ रावण का चरित्र चित्रण करना हो, तथा उस का गौरव मापना हो तो उस की मृत्यु पर विभीषण का विलाप सुनो, राम द्वारा रावण को दिया गया प्रमाण-पत्र पढो, जव राम ने उसे महात्मा तथा अपना बड़ा भाई तक कह डाला।

□ रावण का व्यक्तित्व कितना मोहक एवं प्र[illegible]
सुनिये वाल्मीकि मुनि के मुख से :—

विभीषण विलाप

अब भाई को पृथ्वी पर अचेत चित् पड़े देख 'विभीषण' मगर के आंसु बहाने लगा, नाना विलाप करता हुआ वह विलखते हुए बोला :—

● हाय ! भ्राता ! तुम विख्यात पराक्रमी होकर धूलि धूसर पृथ्वी पर क्यों पड़े हो ?

● ये तुम्हारी बाजुबन्ध विभूषित दोनों भुजाएँ निश्चेष्ट पड़ी हैं।

● यह तुम्हारा चमकीला मुकुट पृथ्वी पर पड़ा है। तुम्हारे मरते ही :—

● आज सुनीतियों का बान्ध टूट गया है।

● आज धर्म का विग्रह (शरीर) नष्ट हो गया है।

● आज सत्त्व का सत्त्व (सार) जाता रहा है।

● आज हस्तलाधवशाली वीरों का आश्रय भग्न हो गया है।

● आज सूर्य पृथ्वी पर आ गिरा है।

● आज चन्द्रमा अन्धेरे में डूब गया है।

● आज अग्नि शीतल हो गया है।

● आज उत्साह की कमर टूट गई है।

● आज बल विक्रम समाप्त हो गया है।

● आज विज्ञान का विकास रुक गया है।

● आज वैदिक कर्म काण्ड खण्डित हो गया है।

● आज विद्या अज्ञानग्रस्त हो गई है।

नोट : ये हैं रावण के प्रति वाल्मीकि के उद्‌गार।

जिन्हें अज्ञान कलुषित मानस वाले नहीं समझेंगे।

● विभीषण का युक्ति युक्त एवं सार्थक करुण क्रन्दन सुनकर राम ने उसे सान्त्वना देते हुए कहा—देखो मित्र ! विभीषण ! तुम्हारा वीर भ्राता निकम्मा बैठे बैठे नहीं मरा, इस ने रोग शय्या पर एड़ियां रगड़ते दम नहीं तोड़ा। अपितु इस ने समर में प्रचण्ड विक्रम दिखाया है।

[illegible] उत्साह बड़ा बढ़ा-चढ़ा था, यह निडर था, इसने रणभूमि [illegible] इस की मृत्यु छाती पर प्रहार से हुई है।

● जो वीर पुरुष अभ्युदय की कामना से क्षात्र धर्म स्वीकार कर सन्मुख मारे जाते हैं, वे वैकुण्ठ में निवास करते हैं। उनका शोक नहीं करना चाहिये। तदुक्तम्—

द्वाविमौ पुरुषौ लोके, सूर्यमण्डल भेदिनौ।

ब्रह्मविद्योग युक्तश्च, रणे चाभि मुखो हतः॥

● जिसने इन्द्र सहित तीनों लोक परास्त कर दिये, उसका शोक कैसा? फ़िर युद्ध में सदा विजय ही अवश्यंभावी नहीं होती, वीर पुरुष कभी शत्रुओं को मारते हैं तो कभी स्वयं बलिहार हो जाते हैं। यह तो क्षत्रियों की सनातन गति है। (६।१०६।१४-१८)

वैरविरोध जीते जी होते हैं, अब तुम इसका संस्कार करो, अब यह महात्मा जैसा तुम्हारा भाई है वैसे ही मेरा है।

● विभीषण ने कहा राम! मेरा भाई 'आहिताग्नि' था, महातपस्वी था, वेदान्तवेत्ता था, कर्मकाण्डी था, मैं आपकी कृपा से इसकी वैदिक विधि से अन्त्येष्टि करना चाहता हूं॥२३॥

नायं विनष्टो निश्चेष्टः, समरे चण्डविक्रमः।

अत्युन्नतमहोत्साहः पतितोऽयमशङ्कितः॥१४॥

नैवं विनष्टाः शोच्यन्ते, क्षात्र धर्म व्यवस्थिताः।

वृद्धिम् आशंसमाना ये, निपतन्ति रणाजिरे॥१५॥

येन सेन्दादयो लोकास्, त्रासिता युधि धीमता।

तस्मिन् कालसमायुक्ते, न कालः परिशोचितुम्॥१६॥

नैकान्तविजयो युद्धे, भूतपूर्वः कदाचन॥

परैर्वा हन्यते वीरः परान्वा हन्ति संयुगे॥६।१०६।१७॥

तेजस्वी, बलवान्, शूरः संग्रामेष्वनिवर्तनः।

महात्मा बल सम्पनो रावणो लोक रावणः॥६।११२।१००॥

मरणान्तानि वैराणि, निवृत्तं नः प्रयोजनम्।

क्रियता मस्य संस्कारो, ममाप्येष यथा तव॥

कहते हैं कि "रूप यौवन सम्पन्नं" (५।१६।१) रावण को कोई देख लेता (या देख लेती) तो उसी का हो जाता (या हो जाती)।

□ प्रभाव की झलक देखनी हो तो आओ देखो उग्र तेजस्वी भी हनुमान् रावण के तेज से हत प्रभ होकर सीसम के घने पत्तों में छिप कर जा बैठा है, हनुमान् के मुख से बरबस निकल पड़ा कि :—

"अहो रूपम् ! अहो धैर्यम् ! अहो सत्वम् अहो द्युतिः !
अहो ! राक्षस राजस्य, सर्व लक्षण युक्तता !!! (५।४६।१७)

कलाकार रावण

आप देख ही चुके हैं कि रावण ने स्नायुवाद्य यन्त्र (सारङ्गी) की कर्ण-मधुर तानों से भगवान् भूतभावन भूतनाथ को वशीभूत कर लिया था।

कहते हैं कि—जादू सो, जो सिर चढ़ बोले। गुण वह जिस की शत्रु भी प्रशंसा करे।

कहते हैं कि 'हाथी के पाओं में सभी पाओं,' इस धारणा से देखो। कि महर्षि वाल्मीकि ने रावण को कौन कौन से विशेषण दिये हैं :—

धर्मात्मा, धर्मनिष्ठः, धर्मपरः, धर्मपथे स्थितः, धर्मज्ञः, धर्मे प्रयत मानसः, आहिताग्निः, अत्युन्नत महोत्साहः शुद्धाचरणः, शुचिः, स्वाध्यायी, सत्परिश्रमी, सत्यवान्, सरलः, शमी, सदाचारी, देवपूजकः, ब्राह्मण भक्तः, विद्वान् साधु-बुद्धि, वेदान्त वेत्ता, वेदज्ञः, महातपस्वी, सुशीलः, कर्मयोगी, आर्यः, सौम्यः, महात्मा, दिव्य रूपवान्, अधृष्यः, धैर्यवान्, महासत्वः, महाद्युतिः, सर्वलक्षणयुक्तः, मनोहरः, शस्त्र भृतांवरः, चण्डविक्रमः, तेजस्वी, बलवान्, शूरः, परम शैवः, [illegible] विज्ञानी, अयमुत्सहते क्रुद्धः कर्तुमेकार्णवं जगत्,।

आप देखिये कि आदि कवि ने इन विशेषणों में रावण के तीन गुणों का प्रतिपादन किया है :—१ विद्वान् २ कर्मठ एवं शूर।

□ रावणायन पढ़ने वालों के मन में एक प्रश्न उठेगा कि यदि 'राक्षस' इतने अच्छे थे, तथा 'रावण' उच्च कोटि का भद्रपुरुष एवं महात्मा था तो विश्व भर में रावण तथा राक्षसों के प्रति इतनी तीव्र घृणा भावना क्यों है ? कि महाक्रूरता के लिये 'राक्षस' शब्द प्रतीक बन गया है, अत्याचारी महापापी भयानक तथा दुर्जन व्यक्ति का प्रसिद्ध उपमान हो गया है 'रावण'। ऐसा क्यों ?

□ इस का सामाधन यह है कि ऐसी भावना विशेषतया उत्तर भारत में ही है, क्योंकि राम उत्तर प्रदेश = उत्तर कोशल का निवासी था, उसका रावण से वैर हो गया, अतः उत्तर भारतीयों के हृदयों में रावण तथा राक्षसों के प्रति उग्र भावना है, और इस भावना की पोषक है प्रति वर्ष दोहराई जाने वाली 'रामलीला', और रावण के पुतले का जलाया जाना। तथा कथावाचकों का प्रचार।

क्योंकि हम अपने को राम पक्षीय समझते हैं, अतः ऐसी धारणा एक पक्षीय है, और एक पक्षीय वक्तव्य कोई तथ्य का मापदण्ड नहीं होता। यदि आप राक्षस पक्ष का साहित्य पढ़ें तो उक्त प्रश्न का उत्तर मिल जाएगा।

पाश्चात्य देश 'असुर' = 'अहुर' पूजक हैं, उन के मनों में तथा उन के साहित्य में देवों (द्यो) के विषय में वैसी ही कथाएं वैसे ही वर्णन पाए जाते हैं। जैसे कि हमारे यहां राक्षसों के विषय में।

□ हम बचपन में अपनी माताओं से अपनी पड़ोसिनों से ऐसी कथाएं सुना करते थे—क्योंकि हमारा पडोस यवन प्राय था।

एक गांव में कोई द्यो (देव) आया करता था, उस का शरीर बहुत बड़ा तथा भयानक था, उसके सिर पर दो सींग थे, दो लम्बे दान्त मुँह से बाहर निकले हुए, रंग काला, नाखून लम्बे, सिर के [illegible] बिखरे हुए, आवाज डरावनी थी।

'देव' आने के पहले जोर की आंधी आती थी, वह जिसे पाता खा जाता, उसका भोजन बहुत होता, वह लोगों को उठा ले जाता, विशेषतया स्त्रियों को।

एक बार एक देव एक सुन्दर युवती को उठा ले गया, उसने उसे अपने एक घोर निर्जन घर में कैद कर रक्खा और यथा समय आकर इस से भोग विलास किया करता था।

वह बेचारी उस के चले जाने पर वहां अकेली रहती थी बस तनहाई (एकान्त वास) के बिना उसे और कोई कष्ट न था। देव आता तो उसके लिये नाना भोजन लाता।

एक दिन कोई मनुष्य भूला भटका उधर आ निकला, वह ऐसे बीहड़ स्थान में एक कोमलांगी युवती को देख कर बहुत विस्मित हुआ, एवं वह नारी उस युवक को देख कर बड़ी प्रसन्न हुई।

फिर कुछ उदास एवं खिन्न होकर वह बोली कि तुम यहां क्यों आ गए हो, यह तो एक 'द्यो' का दुर्ग है, यहां आकर कोई भी मनुष्य जीवित लौट नहीं सकता। 'द्यो' बड़ा क्रूर है, यह मुझे उठा लाया है, और यहां रक्खा है, उसके आने का समय हो गया है, तुम शीघ्र भाग जाओ, नहीं तो वह तुम्हें खा जाएगा।

वह युवक बोला देवी! तुम चिन्ता न करो, मैं तुम्हें बन्धन मुक्त करूंगा, एक बार मैं देख लूं कि वह 'द्यो' कैसा है?

नारी ने उस युवक को घर में छिपा लिया, इतने में वह 'द्यो' आगया एवं आते ही वह बोला आज यहां 'मानुष गन्ध' आ रही है, बताओ कौन है? वह, कहां है?

नारी बोली मानुषी तो यहां मैं ही हूं मुझे खा ले, पर उसे विश्वास न हुआ और वह इधर उधर मनुष्य को ढूँढ़ने लगा, इतने में [illegible]ने 'द्यो' को धर दबाया एवं मार दिया। ऐसे उस का उद्धार [illegible] ले आया।

वह युवती उस युवक के साहस एवं वीरता पर बहुत प्रसन्न हुई, और उसी की हो गई।

□ यह कहानी बचपन में सुनी होने के कारण मैं ठीक ठीक नहीं याद रख सका।

□ इस से प्रकट होता है कि हमारी मान्यता में जो चित्र एक भयंकर 'राक्षस' का है वही पाश्चात्य लोगों के हृदयों में द्यो या 'देव' का है।

□ वस्तुत: न राक्षसों के सींग-या लम्बे दान्त होते थे, न ही वे भयानक होते थे, ना ही द्यो = देव, ये धारणाएं पारस्परिक द्वेष मूलक हैं।

"किंवदन्ती"

यह भी एक काव्य परम्परा है इस में अद्भुत रस को आत्मा मानते हैं, इसका ढांचा व्यापक है, इसके कवि सर्वथा गुम नाम रहते हैं, और इसकी सृष्टि अनादि काल से अव्याहत चली आ रही है, परन्तु न इसका आदि होता है न अन्त, । अमरबेल की तरह।

पता नहीं चलता इसे कौन घड़ता है, कौन फ़ैलाता है, यह एक श्रुति है।

□ इतिहास में देखा गया है कि कभी कभी महान् नीतिज्ञ अपने स्वार्थ साधन के लिये 'किंवदन्ती' प्रचार प्रसार करते आए हैं आचार्य कौटिल्य = चाणक्य आदि कई कूटनीतिज्ञों ने ऐसा किया है, एवं उसका लाभ भी उठाया है।

□ मालूम होता है कि रावण के जीवन चरित्र में किंदन्तियों की भरमार रही है, उन से लटपथ उसका इतिहास दुरूह हो गया है, घटनाओं के परिप्रेक्ष्य में उस के विषय में कही जाने [illegible] तथ्यहीन लगती हैं।

रावण के १ ब्रह्मा, २ पुलस्त्य, ३ विश्रवण ४ रावण रूपी चार पीढियों के समकाल राम के सूर्यवंशी राजाओं की बयालीस पीढियां कैसे संभव हो सकती हैं? जबकि वह जटायु के समक्ष युवा था, एवं अशोक वाटिका में सीता के पास जाते हुए वह 'रूप यौवन सम्पन्न' था।

आयु में रावण राम से बड़ा ज़रूर था पर कातवीर्याजुन और वाली का समवयस्क था, सुग्रीव भरत का समवय लगता है, विभीषण लक्ष्मण का मित्र-मन्त्री एवं समवय था। शूर्पणखा सीता की आयु तुल्य थी।

रावण की विद्या के सम्बन्ध में भी अतिशयोक्ति पाई जाती है। रावण की योग्यता, बुद्धि वैभव, वलविक्रम भी बढ़ा चढ़ा कर लिखे गए हैं। मालूम होता है उस के दो ही पत्नियें थी, एक मन्दोदरी दूसरी धान्यमालिनी।

रावण के पुत्र 'मेघनाद' के विवाह का उल्लेख नहीं, कहते हैं कि उसकी पत्नी का नाम 'सुलोचना' था जो राम के दल से पति का सिर लाकर सती हो गई थी।

इक लखपूत, सवालख नाती।

उस रावण घर दिया न बाती।।

मानों रावण कोई बरसाती कीड़ा हो।

मुझे पहले भी शंका हुई थी कि दशरथ, जनक, विशाला नरेश सुमति, काशी नरेश प्रतर्दन, केकयराज अश्वपति, श्रृंगवेरपुराधीश गुह, अंगराज लोमपाद, दक्षिण कोशलेश भानुमान्, मगधराज वामदेव, सांकाश्यपुरा धीश सुधन्वा, आदि कई राजा थे जिन को रावण ने नहीं जीता। न मारा।

...यह भी शंका उठती रहती है कि यदि रावण

इतना शक्तिशाली होता तो स्वयं अकेला सीता को हरने क्यों जाता ? राम से टकराया क्यों नहीं ? क्यों उन्हें मायामृग द्वारा अपवाहित किया ।

फिर वियोग में व्याकुल राम लक्ष्मण को क्यों न 'मार' दिया गया, रावण ने समुद्र पर पुल क्यों बँधने दिया ? इत्यादि ।

□ मालूम होता है कि व्यापारिक एवं यात्रिक पोतों द्वारा विभीषण सहित बहुत से राम सैनिकों ने लंका में आकर सागर तट पर मोर्चे लगा लिये होंगे, एवं रावण सेतुनिर्माण में विघ्न डाल ही न सका हो गा ।

□ रावण को तो इतना भी न सूझा कि विद्रोही विभीषण को बन्दी बना देता, उसे स्वच्छन्द रामदल में क्यों जाने दिया ।

□ उधर "निकुम्भिला क्षेत्र" इतना असुरक्षित था कि युवराज मेघनाद पूजा कर रहा है और पूरी "ऋक्ष वाहिनी" वहां जा घुसो चोर द्वारों से अलक्षित ही । मुझे तो लंका समृद्धि भी अत्युक्ति पूर्ण प्रतीत होती है ।

लगता है बाल्मीकि मुनि ने अपनी प्रतिभा के बल से एक आदर्श नायक गुणों की कल्पना कर डाली, फिर उसे उन गुणों का आधार ढूँढना पड़ा 'कोन्वस्मिन्०' के प्रश्न पर नारद द्वारा लगभग तादृश 'राम' सुझाया गया । जिस पर महर्षि ने दिव्य प्रासाद खड़ा कर दिया ।

□ लगभग कहते से मेरा आशय यह है कि राम में सचमुच वे गुण पूर्ण नहीं थे । देखो :—

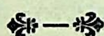
□ जब राम यौवराज्यादेश पाकर माता कौशल्या के पास जाता है, एवं लक्ष्मण से 'खुश' होने को कहता है ।

□ जब राम वनवासा देश पाकर सीता के पास

□ जब राम को सुमन्त्र-गुह के बिना वनवास की पहली रात्रि में अरण्य के उजाड़ वातावरण का अहसास होता है।

□ राम का लक्ष्मण के रोकने पर भी मायामृग के पीछे भागना, छिप कर वाली को मारना, यह जानकर भी कि तारा वाली के जोते सुग्रीव से काम वासना रखती है इसे पत्नी बनाने से न रोकना, छल द्वारा मेघनाद हत्या की स्वीकृति देना, शस्त्र युद्ध के दौरान रावण पर अनजाने में ब्रह्मास्त्र छोड़ना, सीता को धोखे से (तीर्थयात्रा के बहाने) शून्यारण्य में फ़ेंक देना तत्तद्गुणों को अर्थवाद मात्र' प्रकट करते हैं।

इत्यलं महतां दोष दर्शन प्रसंगेन।



रक्षका भक्षका जाता

वानरा वा नराः कथम् ?

● वर्णनों में, चित्रों में, तथा मूर्तियों में 'वानरों' का रूप वन्दरों जैसा पाया जाता है, पर लंका विजय में राम के सहायक 'वानर' कुछ विचित्र ही चित्रित किये गए हैं।

● हनुमान्-सुग्रीव-अंगद-वाली आदि वानर चौपाए नहीं, दोपाए तथा द्विबाहू हैं।

● वे नंगे नहीं, जांघिये पहनते हैं, उत्तरीय भी, कण्ठहार भी, परन्तु जूते नहीं।

● वे विना पंख आकाश में उड़ते हैं, जैसे चील, कौवे।

● वृक्ष, पर्वत, दान्त, मुक्का, लात, नख, उनके प्रहरण होते हैं।

● उन के मुख वन्दरों, रीछों जैसे तथा शरीर मनुष्यों जैसे होते हैं पर शरीर पर लम्वे वाल एवं पूंछ होती है तथा सिर पर घुँघराले केश भी।

● वे मनुष्यों की तरह बैठते, लेटते, चलते हैं।

● वे नाना भाषाएं वोलते हैं, प्रौढ़ संस्कृत भी।

● वे सुरा भी पीते हैं, माँस भक्षण भी करते हैं।

● वे नाचते, गाते, बजाते हैं।

● मानों अच्छा खासा व्यंग्यचित्र (कार्टून) बन जाता है, जिससे कि एक "आदर्श जीवन चरित्र" देश विदेशों में उपहासास्पद बन गया है। परन्तु इन की स्त्रियाँ बन्दरियां नहीं चित्रित की जाती, वे तो कंकयी, सीता, मन्दोदरी जैसी नारियां हैं, देखो-गीता प्रेस गोरखपुर की रामायण में 'तारा' आदि वानर पत्नियों के चित्र।

भला यह भी कोई बात हुई ? कि तारा जैसी, [illegible] चारुहासिनी, (तारा) ताराधिपानना (चन्द्रमुखी) [illegible]

परमसुन्दरी, मञ्जुभाषिणी सम्भ्रान्त महिला के पेट से अंगद जैसा बन्दर जन्मे। (४।१६।१, ३३।२१, ३३।२५)

ऐसे वर्णनों ने रामायण सरीखे उत्कृष्ट, वेदतुल्यमान्य, काव्य, शास्त्र, इतिहास, ग्रन्थ को कपोलकल्पित अफ़साना बना के रख दिया है।

नोट :-पता नहीं चलता कि ऐसे हीन, मूर्खतापूर्ण, असंभव, अनुपयोगी, प्रक्षेप कब ? किसने ? क्यों ? डाल दिये होंगे ? इस अमृतसागर में विष घोलने वाले ने लोक का, संस्कृत-साहित्य का, जाति का, इतिहास का क्या उपकार किया है ?

पर मजा यह है कि प्रक्षेप डालने वाला संस्कृत का कुकवि भी है, वह रामायण में इन्हें डालते समय इनके विरोधी वर्णनों को निकालना भूल गया, जैसे कि वे सरस प्रांजल भाषा में अभी तक रामायण में पाए जाते हैं।

● काव्य का मुख्य प्रयोजन होता हैं 'कान्ता सम्मततया' यह शिक्षा देना कि "नायकवत्प्रवर्तितव्यं न प्रतिनायकवत्"। हम लक्ष्मण भरत जैसे भाई बने, सुग्रीव जैसे मित्र, राम 'जैसे' पुत्र, हनुमान् जैसे साहसी बफ़ादार, जाम्बवान् जैसे मन्त्री, नल जैसे शिल्पी, अंगद जैसे अप्रधृष्य युवराज, शतबलि जैसे सेनापति, जटायु जैसे आत्म बलिदानी बांधव, बने। भला इस बन्दर लीला से इनका अनुकरण कैसे सम्भव हो पाएगा ?

मित्र की पुतोहू के लिये अपने प्राण न्यौछावर करने वाला वह 'महान् तीर्थ रूप' वृद्ध महात्मा 'जटायु' गन्दे शवखाने वाले गीध के रूप में हमारी श्रद्धा का पात्र कैसे बन सकता है ?

आइये हम देखें कि रामायण के ये पुनीत पात्र महर्षि वाल्मीकि [illegible] प्रतिभा द्वारा कैसे अंकित किये गए हैं ?। मूल रामायण में [illegible]दर्श मानव का चरित्र चित्रण करना चाहा, और वह

उस में सफल हुआ, जिस के प्रभाव से 'राम' इतना विश्वादरणीय हो गया, एवं "रामराज्य" शब्द एक आदर्श राज्य का प्रतीक बन गया।

मैं एक धृष्टता करना चाहता हूं कि यदि वाल्मीकि एवं 'व्यास' न होते तो भारत वर्ष का इतिहास अन्धकारमय होता। आप देखेंगे कि रामायण के सारे पात्र उच्चकोटि के हैं, भले ही वे नायक हों या प्रति नायक।

वानरों का प्रथम दर्शन

● वानरों का प्रथम दर्शन सीता को ऋष्यमूक पर्वत पर हुआ, जब उसने उनकी ओर चुनरी में लपेटकर कुछेक भूषण फैंके। वे थे-१ सुग्रीव, २ हनुमान्, ३ जाम्बवान्, ४ नल, ५ नील। सीता ने इन्हें भद्रपुरुष समझ कर इस अभिप्राय से भूषण फैंके थे कि शायद राम मुझे ढूंढ़ते इधर आ निकलें तो उन्हें मेरा सुराग मिल जाए।

सीता की दूर दर्शिता पूर्ण यह युक्ति सफल हुई। स्पष्ट है कि ये बन्दर नहीं थे, वर्ना सीता 'कीमती' भूषण बन्दरों की ओर 'न' फैंकती।

● इनका दूसरा साक्षात्कार राम को हुआ जब वह निराश हो कर पम्पासर पर बैठा रो रहा था, उस समय हनुमान् 'भिक्षु 'रूप' बनाए आकर इनका परिचय पूछता है। इस की बात चीत से 'प्रभावित' होकर राम लक्ष्मण उसके साथ ऋष्य मूक के लिये चल पड़े।

● तीसरी मुलाकात सुग्रीव से हुई, राम ने उसके हाथ पर हाथ मारा, गाढ़ालिगन किया। अग्नि होत्र करके दोनों ने तीन अग्नि परिक्रमाएं कीं एवं मैत्रीकरण हो गया।

● अयोध्या गमन पर भरत ने सुग्रीव को पांचवां भाई कहा।

● शत्रुंजय' नामी हाथी पर सुग्रीव की शोभायात्रा निकाली।

● भरत सुग्रीव का हाथ पकड़ कर उसे राम के पहले वाले भवन में छोड़ने गया एवं तारा-रुमा सीता के पलंगों पर लेट गईं।

और शत्रुघ्न वहां स्वयं रोशनी का प्रबंध कर

● अथ च कौशल्या ने अपने हाथों से वानर पत्नियों के सोलह श्रृंगार किये।

● इस को कहते हैं कृतज्ञता का, आर्य संस्कृतिका आदर्श (नमूना)।

अथाब्रवीद् राजपुत्रः सुग्रीवं वानरर्षभम् ।
परिष्वज्य महातेजा भरतो धर्मिणां वरः ॥६।१२७।४६॥
त्वमस्माकं चतुर्णां वै भ्राता सुग्रीव पञ्चमः ॥४७॥
ततः शत्रुंजयं नाम कुञ्जरं पर्वतोपमम् ।
आरुरोह महातेजाः सुग्रीवः प्लवगर्षभः ॥६।१२८।३१॥

एक बात और बता दूं रामाश्वमेघ 'यज्ञ में यही वानर ब्राह्मणों को भोजन परोसते थे, सुना आपने ? (७।९२।६)।

एक और सुन लो ब्राह्मण वानरों के घर भोजन भी जीमते थे। पूरी-कचौरी-हलवा न जाने क्या क्या ? (४।२६।२९)

और ये बन्दर ब्राह्मणों के नियमित यजमान थे, एवं ब्राह्मण इन के कुल पुरोहित थे। वानर गुरुकुलों में विद्या व्रत स्नात होते थे। एवं शास्त्रों के पण्डित। यथा सुग्रीव, हनुमान् आदि।

वानरों में स्त्री शिक्षा भी प्रचलित थी, यथा तारा आदि। इन में बाल विवाह की प्रथा 'नहीं' थी। जैसे अंगद सेनापति हो कर भी अभी कुंवारा था।

● ये प्रातः सायं सन्ध्योपासन करते थे, वेदमन्त्रों का सस्वर पाठ भी करते थे।

● ये आपस में 'आर्य' कहते थे, एवं स्त्रियें पति को 'आर्यपुत्र'।

● इन में 'दाम्पत्य प्रथा थी, जो बन्दरों में नहीं होती।

● इन के नियमित राज्य थे, एवं राजधर्म वैदिक था।

...में विश्वास था कि पुरुष सन्मुख युद्ध में मर कर स्वर्ग जाता है ...गों के साथ साथ अप्सराएं (हूरें) भी मिलती हैं।

● चौथा साक्षात्कार 'वाली' से हुआ, इस का शरीर (कनक प्रभ=) सोने की तरह चमकता था डोल डौल बड़ा था, इस के गले में इन्द्रदत्त सुवर्णमाला सदैव शोभा देती थी, जो मृत्यु पर्यन्त गले में रही। अतः यह गप्प है कि पहली लड़ाई में समान रूप होने से राम इन्हें पहचान न सका, तब सुग्रीव 'के गले में' वनलता डाल दी गई। अथ च गप्प घड़ने वाले ने इन्हें नंगे 'दो बन्दर' समझ लिया होगा, वर्ना कहां शाही ठाठ-बाठ में वाली ? और कहां फटे पुराणे हाल में, अधनंगा, निर्वासित रंक, सुग्रीव।

वाली कई युद्धों का विजेता था, इस ने रावण को वन्दी बना कर मित्र एवं भाई वना लिया था। यह नित्य 'तुंग भद्रा' नदी के तट पर सन्ध्या किया करता था, एवं वेद मन्त्रों का जाप भी।

कहते हैं कि युद्ध में आंख से आंख मिलाते ही यह शत्रु की आधी शक्ति हर लेता था।

(शायद इसी लिये राम को इस के सामने आने की 'हिम्मत नहीं हुई और वन्य पशु की तरह छिप कर इस का शिकार किया गया।)

● इसने मरते मरते कितनी ओजस्विनी वाणी से राम को डाँट पिलाई थी ? पढ़लीजिये। युक्तियों प्रमाणों से 'वाली' का पाण्डित्य प्रकट होता है। ४।१७।१४-५२) सच पूछो तो राम से वाली के तर्कों का कोई युक्ति युक्त उत्तर नहीं बन पड़ा, सिवाए इसके कि विजेता सदा सच्चा होता है एवं पराजित नितान्त झूठा।

वाली की शवशिबिका विमान जैसी थी, शवस्नान के बाद चन्दन चर्चित कर के उस का अन्त्यमण्डन किया गया, उसे पुष्यों से 'लाद' दिया गया। चन्दन चिता में अंगद ने यज्ञोपवीत अपसव्य कर के वेद मन्त्रों से अन्त्येष्टि की, तुँग भद्रा में सचैल 'स्नान कर के तिल तोयाञ्जलि दी गई। (४।२५।५०,५१)

क्या 'ये' बन्दरों के 'कृत्य' हैं या एक पूर्ण आस्तिक द्विजाति के ?

● पांचवाँ दृश्य सुग्रीव के 'राज्याभिषेक' का है, सुग्रीव को श्वेत वस्त्र 'पहनाए' गए, चन्दन-कुंकुमानुलेपन' किया गया, (जो कि 'बन्दर' के बालों में असंभव है।) गले में पुष्प मालाएं, पैरों में कोमती जूते पहनाए गए, माथे पर गोरोचन से राजतिलक किया गया, जब कि बन्दरों के माथा होता ही नहीं। सोलह कन्याओं (वन्दरियों) ने लाजा मंगल किया।

कालीन बिछे सुवर्ण सिंहासन पर रुमा सहित सुग्रीव को पूर्वाभिमुख बैठा कर ब्राह्मणों ने महर्षि निर्दिष्ट वैदिक पद्धति से अग्निहोत्र पूर्वक स्वर्ण घटों से अभिषेक किया। श्वेत छत्र तथा सुवर्ण दण्ड वाले चामर झुलाए गए। (४।२६।२३-४२)

उस 'समय' बड़ा आनन्द आया जब सुग्रीव के घर 'ब्रह्म भोज' में वेद पाठी ब्राह्मण पूरी, कचौड़ी, हलवा, माण्डा उड़ा रहे थे, पीछे उन्हें वस्त्र-रत्न दक्षिणा दी गई। भूरी दक्षिणा के लोभ में ब्राह्मण वन्दरों के घर भोजन चट् कर गए।

मैं वहां होता तो उन का पंक्ति-वहिष्कार (हुक्का-पानी बन्द) करवा देता।

● आओ अब आपको छठा नजारा दिखाएँ, देखो-२ लक्ष्मण वर्षा ऋतु के बाद सुग्रीव को चेतावनी देने किष्किन्धा पुरी जा रहा है, सुनो—यदि आप को भी 'बन्दरों की मान्द' देखने का शौक हो तो आओ 'हम' भी लक्ष्मण के साथ हो लें।

● हम ने देखा कि किष्किन्धापुरी के प्रवेश द्वार पर महाकाय द्वारपाल पहरा दे रहे हैं। लो, वे लक्ष्मण को आते देख प्रणाम पूर्वक एक ओर हट गए एवं हम भी 'लक्ष्मण' के पीछे पीछे अन्दर जा घुसे। वहां हमने देखा कि पुरी रत्नमयी है। उस के बाज़ार लम्बे चौड़े हैं, जिन के दोनों ओर पुष्पपादप एवं छायाद्रुम 'लहरा' रहे हैं।

बाज़ारों के दोनों ओर बड़े-बड़े भवन हैं, जिन के आगे अंगद, [illegible] ...म्बवान्, नल, नील, तारा आदि सम्भ्रान्त व्यक्तियों की नाम [illegible] ...ाकि किसी को किसी का घर पूछना न पड़े।

राज मार्ग में गिरि नदी की कूलें' वह रही हैं जिन के पर्श-किनारे पक्के हैं, मार्ग में सुरभिजल का छिड़काव हो रहा है। घर धन धान्य स्त्री रत्नों से परिपूर्ण हैं, जिन में से नाच गाने बजाने की ध्वनियें आ रही हैं। पौरजन दिव्य वस्त्राभरण पहने बड़े ही प्रिय 'दर्शन लगते हैं।

इतने में सुग्राव का राजप्रासाद आ गया, द्वार पर बलिष्ठ-सशस्त्र प्रतिहार नियुक्त हैं, हमें किसी ने रोका टोका नहीं, ना ही प्रवेशपत्र (गेट पास) पूछा। इस तरह हम सात कक्षाएं लांघ गए, 'जिन के बड़े बड़े कमरों में बढ़िया सोफ़े, कालीन, चान्दी सोने के पलंग एवं चित्रशालाएं सज रहे थे।

● सुनियें, सुनियें, वीणाएं बज रही हैं, मधुर गीत गातीं, रूप यौवन गर्विता, कुलीन युवतियां, पुष्पों से लदी हुई दिव्याभरण वस्त्र भूषिता वानरियां पायल करधनी की झनझनाहट से नाच रही हैं। लीजिये लक्ष्मण को तो लज्जा आ गई।

परन्तु शायद इन्हें बन्दर कहने वालों को लज्जा न आए। आइये हम लौट चलें।

यह समाचार सुन झट् से सुग्रीव ने तारा से कहा — सुभ्रू ! सुना है लक्ष्मण आ रहा है, तुम स्वयं जा कर स्वागत पूर्वक उसे ले आओ। वह कहीं नाराज़ 'न' हो, तुम्हारे आकर्षक सौन्दर्य 'का' दीदार करते ही 'उस का गुस्सा काफ़ूर हो जाएगा। और फ़िर तुम' तो मञ्जुभाषिणी भी हो।

कहते हैं उस समय तारा नशे में चूर थी, उस के पाओं लड़खड़ा रहे थे।

● सातवीं झांकी सुग्रीव के जालूस की है। देखिये सुग्रीव वर्षा ऋतु के बाद राम को मिलने प्रस्रवण 'गिरि जा रहा है, सोने की चमकती पालकी में सुग्रीव और' लक्ष्मण बैठे हुए हैं, श्वेत छत्र, दो चामर झूल रहे हैं, आगे मिल्ट्री 'बैण्ड' बज रहा है, सूत-मागध-वन्दी जन गान कर रहे हैं, चारों ओर सशस्त्र पुलिस का मार्च हो

नोट—परन्तु जब ये लंका पर अभियान करेंगे तो सारे बन्दर कूदते फाँदते जा रहे होंगे, एवं राम हनुमान् के कान्धे पर सवार होगा तथा लक्ष्मण को अंगद उठा ले जाएगा, यह सम्मान महावीर अथच युवराज को प्राप्त होना ही चाहिए। बोलो जय भंग भवानी की।

□ वानरों का आठवाँ दृश्य सेना की विजययात्रा का, 'सेतुनिर्माण' का, लंका पर आक्रमण का, इन के युद्ध कौशल का, अथ च साम्राज्य विध्वंस का है।

□ वानरों की आकृति-प्रकृति-संस्कृति का वर्णन हो चुका, अब विचार्य है कि इन्हें यह नाम कैसे मिल गया ? कई कहते हैं कि पहले दक्षिण में 'वानर' नाम की एक मनुष्य जाति रहती थी, इस पर प्रश्न उठता है कि वह जाति अब कहां गई, अब तो वहां इसका नामो निशां भी नहीं। और फ़िर रामायण में भी इस का उल्लेख कहीं नहीं, जैसे कि विद्याधर, यक्ष, राक्षस, गन्धर्व, किन्नर, पिशाच गुह्यक, सिद्ध, भूत नाग जातियों का और उन के प्रदेशों का उल्लेख पाया जाता है। हां 'वनालय' जाति का उल्लेख ५, ६, ७, काण्डों में भी है जो वानर का मूल रूप है।

रामायण के वानर पात्र तो इन्हीं उपरोक्त जातियों के मिश्रण से अस्तित्व में आए हैं, जहाँ इन के जनक उपरोक्त देव थे वहां इन की जननियें भी विद्याधरी, यक्षी, गन्धर्वी, किन्नरी आदि थीं। और फिर तारा आदि-नारियाँ वाली, सुग्रीव, अंगद आदि जैसी क्यों नहीं चित्रित की जाती ? (१।१७।५-१६)

यथा—इन्द्र का पुत्र वाली। सूर्य का सुग्रीव। पवन का हनुमान। वृहस्पति का तार। कुबेर का गन्धमादन। अग्नि का नील। वरुण का सुषेण। विश्वकर्मा का नल, आदि। न जनक बन्दर, न जननी बन्दरी तो पुत्र बन्दर कैसे ? क्योंकि कहा है कि :-

"यस्य देवस्य यद् रूपम्, वेषो, यश्च पराक्रमः।
...समं तेन, तस्य तस्य पृथक्, पृथक् ॥" ४।१७।२०

अर्थात् जिस देव का जैसा रूप है, जैसा वेष है, जैसा 'बल विक्रम' है उसके सदृश ही उनके अंशावतार=पुत्र उत्पन्न हुए, जिनके वेष-रूप-पराक्रम-भिन्न भिन्न थे।

वाल्मीकि-कालिदास प्रभृति कवियों की रचनाओं में 'प्रसाद' गुण प्रधान होता है—

'चित्तं व्याप्नोति यः क्षिप्रं शुष्केधन मिवानलः'

जो स्पिरिट की तरह डालते ही शरीर में फैल जाए। अथवा इनकी रचनाओं की पहचान ही यह है, जिसमें क्लिष्ट कल्पना हो वह वाल्मीकि या कालिदास की रचना ही नहीं, इनकी रचनाओं को तो मेरे जैसा अल्पविषया मतिमान् भी सुखेन समझ सकता है, इसका उदाहरण है उपरोक्त पद्य, एक हिन्दी जानने वाला भी इसका सही अर्थ लगा सकता है। यह कोई 'खण्डन खण्ड खाद्य' की भाषा नहीं है।

● कोई इन वानरों से पूछे तो ये अपने को आर्य कहते हैं, देखो अंगद कहता है :—

"आर्यः कः विश्वसेत् जातु, तत्कुलीनोविशेषतः ॥४।५५।७॥"

अर्थात् कौन आर्य सुग्रीव का विश्वास करेगा, खासकर मेरे जैसा जो उसी के वंश में जन्मा हो?

कुम्भकर्ण के भय से भागते हुए वीरों को ललकारता हुआ अंगद कहता है अरे!

"कुलेषु जाताः सर्वेऽस्मिन् विस्तीर्णेषु महत्सु च।
क्व गच्छत भयत्रस्ताः प्राकृता हरयो यथा॥
अनार्याः खलु यद्भीता स्त्यक्त्वा वीर्यं प्रधावत।
प्राप्नुयास्मोब्रह्मलोकं। निहता गतजीविताः ॥६।६६।१८—२५॥

अर्थात् तुम तो बड़े बड़े उच्च कुलों में जन्मे हो ... (सचमुच के) बन्दरों की तरह किधर भागे ज...

नोट :—प्राकृता हरयः' शब्दों से सिद्ध हो जाता है कि ये नकली वानर थे, वर्दी पहनकर पूंछ लगाकर मुखौटा लगाकर स्वयं बने हुए ।

□ तारा विलाप करती हुई वाली को 'आर्य' एवं 'आर्यपुत्र' कहती है :

"नूनम् अप्सरसाम् आर्य! चित्तानि प्रमथिष्यसि ।।४।२०।१३।।

अर्थात् हे आर्य ! आज तुम्हारे संगम के लिए स्वर्ग में अप्सराएं तड़प रही होंगी । सुग्रीव कहता है ।

'ओर्ध्वदैहिकम् 'आर्यस्य' क्रियता मनुकूलतः' ।।४।२५।३०।।

□ और ये वानर लोग ब्राह्मणों के यजमान थे :—४।२६।२१, ४।१८।१८, ४।१६।२७, ४।२०।१३, इत्यादि देखो ।

उपसंहार :

□ सुग्रीवादि बन्दर होते तो ? :—

□ सीता इनकी ओर भूषण क्यों फैंकती ?

□ ब्राह्मण इनके घर भोजन क्यों खाते !

□ सुग्रीव-हनुमान् गुरुकुल में कैसे पढ़ते ।

□ हनुमान् राम के पास भिक्षुब्राह्मण बन कर कैसे आता ?

□ सुग्रीव हाथी पर कैसे चढ़ बैठा ।

□ ये चौपाए क्यों नहीं चलते ?

□ इनको यज्ञोपवीत कैसे पहनाए गए ?

□ इनके कानन कुण्डल कुञ्चित केशा कैसे ?

□ तारा ताराधिपानना जैसी रूप यौवन गर्विता सुन्दरियां इनसे भोग विलास कैसे करती होंगी ?

[illegible] मद्य मांस सेवन नहीं करते ।

[illegible] मां बन्दरी क्यों चित्रित नहीं की जाती ?

□ हनुमान् बन्दर होता तो दिन में सीता को ढूँढ़ने क्यों न गया, सायं तक क्यों छिपा रहा ?

□ हनुमान् आदि युद्धकाल में सीता को मिलने क्यों न जाते रहे ?

□ सीता से वार्तालाप करते हुए हनुमान् पर रक्षा राक्षसियों को शक क्यों हुआ ?

□ वानरों में वैवाहिक प्रथा क्यों थी ?

□ सुग्रीव ने 'फ्लैक्स के' कीमती बूट कैसे पहन लिए।

"शतशो नैर्ऋतान् वन्या, जघ्नु र्वन्यांश्च नैर्ऋताः ।"
नैर्ऋतास्तत्र वध्यन्ते प्रायेण नतुवानराः ॥ म.भा. ३।२८७/२६

□ ये चन्दन चर्चा कैसे करते थे।

□ यज्ञोपवीत धारण, वेदपाठ, सन्ध्यावन्दन, हवन, करने से ये द्विज क्यों नहीं ? ।

□ ये सुरापान क्यों करते थे, सुग्रीव तो चौमासा भर होश में ही नहीं आया, पूछ लो वाल्मीकि मुनि से।

पीत्वा पीत्वा पुनः पीत्वा यावत् पतति भूतले ।
उत्थाय च पुनः पीत्वा

की धारणा से इसने तो किष्किन्धोपवन में प्राइवेट 'मधुशाला' (क्लब) भी खोल रखी थी।

● पहले दक्षिण हैदराबाद इलाके में एक जंगली जाति थी जिन्हें वनालय (या वन्य) कहते थे। जिससे वानर बन गता, पश्चात् सभ्य राज्य होने पर भी इन्हें वानर ही कहा जाता रहा।

गोस्वामी तुलसीदास के प्रभु तरुतल कपि डाल पर बैठे हैं। एवं अधम शरीर राम जिन पाए हैं, परन्तु वाल्मीकि के कपि तो मणिमय महलों में रहते हैं, सुवर्णमय कालीन विछे पलंगों पर सोते हैं, बूट सूट पहनते हैं। एवं रामाश्वमेध यज्ञ में ब्राह्मणों को 'प्रयता' हो कर भोजन परोसते हैं। हाथी पर चढ़ते हैं।

● हमारे वानरों के पास वृक्ष काटने वाले, पर्वत तोड़ने [illegible] हाथी मात्र पत्थर वृक्षों को ढोने वाले, यन्त्र (क्रेनें) [illegible]

● हमारे वानरों का कृतज्ञ हो कर राम भी अपने को ऋणी मानने में गौरव अनुभव करता है तथा महारानी सीता अपने हाथ से हनुमान् की 'अग्रपूजा' करती है।

वाल्मीकि रामायण में ऐसी शंकाओं के समाधान हैं, जरा दत्तचित्त होकर पढ़ने मात्र की अपेक्षा है, आओ इसका विवेचन करें :—

□ बात ऐसी है कि उन दिनों इन दाक्षिणात्य रजवाड़ों में ऐसी प्रथा थी कि इनकी सेनाओं में सैनिकों की वेषभूषा वानर, लंगूर, रीछ जैसी हुआ करती थी, एवं इनके ध्वजों में भी भिन्न भिन्न चिह्न होते थे।

इनके सैनिक वेष (वर्दी) वानरों जैसी, होती थी, पर ये लोग सैनिक प्रसंगों में ही ये वेष धारण करते थे। क्योंकि स्त्रियां सेना में भर्ती नहीं होती थी अतः वे साधारण स्त्रियों जैसी ही चित्रित की जाती थी।

हमने अंग्रेजी छावनियों में सैनिकों के कई वेष देखे हैं, जिनसे वे पहचाने जाते थे। कोई घाघरा पलटन होती थी तो कइयों की निक्करों के आगे सफ़ेद बालों का मोटा गुच्छा लटकता था, कइयों की टोपी के पीछे लम्बी चोटी लगी होती थी, आदि।

ऐसे इन वानरों के वेष में — सिर पर लम्बा टोप, गले में लाल बुशर्ट, कमर में लाल जांघिया, मुख पर मुखौटा, ऊपर से लम्बी पूंछ लगाई जाती थी। क्योंकि यह वेष वानरों से मिलता जुलता था अतः इन्हें वनालय, वन्य या वानर कहा जाने लगा। पीछे संस्कृत के पर्याय शब्दों का उपयोग होने लगा—कपि, हरि, प्लवंगम आदि। ये 'गोरिल्ला युद्ध' के कारण 'प्लवंगम' कहलाते थे।

यह कल्पना नहीं, ऐतिहासिक तथ्य है इसका प्रमाण रामायण में मिलता है। राम ने युद्ध आरम्भ करने से पहले अपनी सेना में एक अध्यादेश प्रसारित किया था कि कोई भी सैनिक इस आक्रमण में वानर वेष उतार कर मानुष रूप न धारण करे, यह हमारा संकेत रहेगा, हम केवल सात जने ही मनुष्य वेष में शत्रु से लोहा लेंगे।

'न चैव मानुषं रूपं कार्यं हरिभिर् आहवे।
एषा भवतु नः संज्ञा, युद्धेऽस्मिन् वानरे बले ॥ ६।३७।३३ ॥
वानरा एव वः चिन्हं स्वजनेऽस्मिन् भविष्यति।
[illegible]नुषेणैव सप्त योत्स्यामहे परान् ॥३४॥'

और वे सात जने थे—१ राम, २ लक्ष्मण, ३ विभीषण, ४ अनल, ५ अनिल, ६ हर, ७ सम्पाति, पिछले चार माली के पुत्र विभीषण के मामा थे, जो लंका से साथ आए थे।

☐ हनुमान् मानुष वेष में ही पंपासर पर राम के पास गया था। सीता के पास भी।

☐ सुग्रीव आदि वानर, गोलांगूल, रीछ, सब अपने अपने वेष किष्किन्धा में ही उतार गए थे, अयोध्या में मानुष रूप में ही पधारे थे।

☐ हां अंगद वानर रूप में ही रावण की राजसभा में उपस्थित हुआ था।

☐ कहते हैं कि पूंछ वानरों का प्यारा अलंकार था, अर्थात् सजावट के लिए यह वर्दी पहनने के बाद ऊपर से लगाई जाती थी शरीर का अंग नहीं होती थी। तदुक्तम्—

'कपीनां किल लांगूलम्, इष्टं हि प्रिय भूषणम्'।५।५३।३।

☐ बंगाल के कवि मातृगुप्त अपने पूँछ लगाते थे। (बंगाली रामायण पृष्ठ ५२)

☐ भारत में एक जाति के राज्याभिषेक पर पूंछ लगाने की प्रथा है। (बंगाली रामायण पृष्ठ ४२)

☐ अंडेमन में पूँछ लगाने वाली एक जाति है। (सावरकर महाराष्ट्रीकृत रामायण की समालोचना)

☐ विजिगापट्टन की 'शबर' जाति में पूंछ भूषण के रूप में लगाई जाती है (G. रामदास पृष्ठ ७२)

☐ यह तो हुई जगबीती, अब हमारी आपबीती भी सुन लीजिये :—

पंजाब भर में एक प्रथा है कि आश्विन कृष्ण पितृ पक्ष से ही रामलीला आरम्भ हो जाती है, उसमें माताएं अपने लाडले पुत्रों को (पुत्रियों को नहीं) राम दल का लंगूर=सिपाही बनाती हैं, तदर्थ लाल कपड़े की एक बूशर्ट एवं जाँघिया सिला देती हैं उस पर गोटे की धारियां टांकी होती हैं, पावों में 'घुंघरू' मुख पर बन्दर का मुखौटा सिर पर 'लंबा' टोप, हाथ में गदा।

एक ढोलची नृत्य की लय पर ढोल बजाता है और ये 'लंगूर' नाचते हैं, मुहल्लों के कई लड़के, कई टोलियां घूमती हैं। अपरान्ह में रामलीला कमेटी की ओर से एक युवक लंगूर सैनिकों की टुकड़ी ढोल वादन के साथ नाचती कूदती आती है, उसमें एक बूढ़े बाबा नारद मुनि होते हैं, एक हनुमान् और कुछेक सैनिक, ये हमारे 'वीर बाल' उनमें मिल कर नाचते नाचते आनन्दविभोर हो जाते हैं, मानों इन्हें कुमुक मिल गई हो और अब ये लंका को जीत कर ही दम लेंगे।

यह विजय यात्रा नवरात्र भर चलती है।

□ ऐसे स्वांग मेरे पूर्वज, मैं, मेरे भाई, मेरे पुत्र, मेरे पौत्र करते रहे हैं, अब मेरा प्रपौत्र करता है। प्रपौत्री नहीं, क्योंकि लड़कियां सेना में भर्ती नहीं होती। माताएं बच्चों को राम दल में भर्ती कराके उनकी मंगल कामना करती हैं, सिरों पर से पैसे वारती हैं।

● भई ! हम तो अब भी अपने को राम के 'रिटायर्ड' सैनिक समझते हैं, और पैन्शन भी पाते हैं। पर हैं हम मनुष्य, 'बन्दर' नहीं।

● अपरं च यह प्रथा परोक्ष रूप से 'अपने देश, जाति, धर्म, संस्कृति के लिए अनिवार्य सैनिक भर्ती का प्रतीक है, जो शारद नवरात्र की 'शक्ति पूजा' पर सम्पन्न होती है।

● हमें इस बात पर किञ्चिन्मात्र भी विश्वास नहीं कि पूर्वकाल में आँध्र प्रदेश के वानर एवं लंका के राक्षस पक्षियों की तरह उड़ते फिरते थे।

आपने बाली का वेदपाठ सुन लिया, उसका बल, वीर्य नीति पाण्डित्य भी देख लिया, आप सुग्रीव के राज्याभिषेक की फीस्ट भी उड़ा चुके हैं।

तथा किष्किन्धापुरी का वैभव भी देख आए हैं, एवं सुग्रीव की शोभायात्रा भी देख ली, पर आप को विस्मय होगा कि लंका प्रस्थान के समय इनके पास राम-लक्ष्मण के लिए दो ठो टट्टू भी नहीं थे, अतः राम हनुमान् के एवं लक्ष्मण अंगद के कन्धे पर चढ़के लंका गए। और फिर सेतु निर्माण पर इनके पास वृक्ष काटने वाले एवं पर्वत तोड़ने वाले तथा हाथी प्रमाण पत्थर वृक्ष ढोने वाले यन्त्र कहां से आ गए ?

"हस्तिमात्रान् महाकायाः पाषाणांश्च महाबलाः।
समुत्पाट्य यन्त्रैः परिवहन्ति च" ॥६।२२।६०॥

गदा-खड्ग आदि शस्त्रतो ये वानरवीर अपने घर छोड़ आये रावण जैसे त्रिलोक-विजयी सम्राट् से लोहा लेने और उसके अ:त्रों का प्रतिरोध करने के लिए वानरों के शस्त्र थे—दान्त, मुक्का; नख, लात, वृक्ष, पर्वतखण्ड। रावण का आठ घोड़ों का युद्धस्यन्दन राम की ओर दौड़ रहा था, इधर राम पैदल मँडरा रहा था।

ऐसे ऐसे चण्डुखाने से प्रसारित समाचार सुन सुन कर **'कभी कभी मेरे दिल में यह ख्याल आता है'** कि रामायण को कपोल कल्पित बाल विनोदार्थ 'बन्दर लीला' कह दूँ, परन्तु श्री वाल्मीकि मुनि प्रतिपादित इसके दिव्य आदर्श वर्णनों को देख कर मस्तिष्क नहीं मानता।

एक और गप्प सुन लीजिये:—युद्ध आरम्भ होने से पहले सुग्रीव सुवेल गिरि से उड़ कर लंका में जा पहुंचा, वहां लात-मुक्कों से रावण की दुर्गत करके लौट आया। (६।४०।१३)

दूसरा समाचार:—युद्ध में कुम्भकर्ण ने सुग्रीव को उठाकर काख में ऐसा दवाया कि उसके होश उड़ गए, तथापि सुग्रीव ने दान्तों से कुम्भकर्ण के नाक कान काट डाले। (६।६७।८६।८९)

देव नागरी लिपि के 'ऋ' वर्ण का उच्चारण विवादास्पद है, वंगाल गुजरात-महाराष्ट्रादि प्रान्तों में 'ऋ' का उच्चरण 'रु' जैसे सुना जाता है। एवं वे 'ऋषि' को 'रुषि' कहते हैं, और 'कृष्ण' का 'क्रुष्ण' आदि। परन्तु पंजाब तथा उत्तर प्रदेश में 'ऋ' का उच्चारण 'रि' सदृश है एवं वहां 'ऋषि' को 'रिषि' अथ च 'कृष्ण' को 'क्रिष्ण' कहा जाता है।

परन्तु पंजाब में भी कहीं कहीं 'ऋ' का उच्चरण 'रु' जैसा सुना जाता है यथा लोक गीतों में 'रुत बरसात' या 'रुत बसन्त' बोला जाता है।

इस धारणा से 'ऋक्ष' को 'रिक्ष' बोला जाएगा जिस से 'रीछ' बन गया। महाराष्ट्र में 'ऋक्ष' रुक्ष=रूस शब्द बन गए।

अत: मालूम होता है कि रामायण की ऋक्ष वाहिनी जिस का अधिपति जाम्बवान् था 'रूस' की सेना होगी। रामायण में भी नाना देश नाना द्वीपों के सैनिकों को आगमन पाया जाता है। यथा सेनाउद्योग समये—

'ऋक्षराजो महातेजा जाम्बवान्नाम नामत:
कोटिभि र्दशभि व्याप्त: सुग्रीवस्य वशे स्थित:

हनुमान् की जीवनी

कुञ्जर की पुत्री 'अञ्जना देवी' विश्वसुन्दरी थी, विवाह के पहले यह पुञ्जिक स्थला नाम अप्सरा थी। (४।६६।८)

इसके पति का नाम था केसरी। (अर्थात् हाथी की बेटी शेर की पत्नी और बन्दर की मां) सुवर्ण गिरि 'सुमेरु' पर केसरी का राज्य था। (७।३५।१९)

एक दिन रूप यौवन शालिनी, विचित्र माल्याभरणा, क्षौमवसना, अञ्जना लाल किनारे की वसन्ती (पीली) साड़ी पहने पर्वत विहार कर रही थी कि वायु के तेज झोंके से उसकी साड़ी जरा उड़ गई, जिससे इसके कुछेक गुह्यांग विवृत हो गए।

अंजना के मनोहर मुख, एक दूसरे से सटे हुए पीन स्तन, एवं गोल मटोल जंघाओं को देख कर पवन देव के होश उड़ गए, वह अपनी सुध बुध खो बैठा, उसने उस तनुमध्या को बाँहों में भर लिया एवं 'वामनी कृत कुचं' गाढ़ा लिंगन कर लिया।

यह देख पतिव्रता अंजना घबरा के बोली—अरे! कौन है तूं? मेरा धर्म नष्ट करने वाला? पवन देव ने धीरे से कहा—सुश्रोणि! घबराओ नहीं, मैं तुम्हें मार नहीं रहा, मैं तो तुम्हें प्यार करता हूं, देखो तुम्हारे कोई सन्तान नहीं है ना? जिसके लिए तुम कठोर साधना, यन्त्र मन्त्र तन्त्र, मन्नतें मना रही हो। मैं तुम्हें वीर्यवान्, बुद्धि-सम्पन्न, तेजस्वी, महा सत्व, महावीर पुत्र दे रहा हूं।

पुत्रोत्पत्ति के वचन से अंजना चुप हो गई, प्रसन्न हो गई। बस एक दिन उस पर्वत की गुफा में अंजना की कोख से पुत्र रत्न उत्पन्न हुआ, जो उपरोक्त गुणों से भी कहीं अधिक योग्य निकला।

शैशवावस्था में यह माँ के हाथ से छूट कर पृथ्वी पर गिर गया, [illegible] बांयाँ (हनु) जबड़ा टूट गया, जो आज तक टेढ़ा है, [illegible] 'हनुमान्', पड़ गया। अपरं च यह जिस गिरि

शिला पर गिरा था वह टूट गई अतः इस का दूसरा नाम बज्रांग (बजरंग बली) प्रख्यात हो गया।

हनुमान् केसरी का क्षेत्रज पुत्र था एवं पवन देव का औरस पुत्र, अतः इसे पवन तनय एवं केसरी नन्दन कहते हैं। शंकर का अंशावतार होने से यह 'शंकर सुवन' कहलाता है।

कहते हैं कि हनुमान् के मूंज का यज्ञोपवीत था 'कान्धे मूंज जनेऊ साजे' भ्रम से मौंजी मेखला के बदले मूँज जनेऊ लिखा गया प्रतीत होता है, अतः यह ब्राह्मण था। मनु के अनुसार ब्राह्मण मूंज की मेखला पहनता है।

बड़ा होने पर यह बालक उन आश्रमों में श्रद्धा विनय पूर्वक शिक्षा पाने लगा, इसके वैदिक संस्कार सम्पन्न हुए। उपनयनानन्तर इसने सूर्यदेव के साम्मुख्य से व्याकरण, छंदःशास्त्र, वेद, वेदांग की शिक्षा पाई। ज्ञान जिज्ञासा वश हनुमान् उदयाचल से अस्ताचल के गुरुकुल में चला गया तथा राजपुत्र होने से यह शस्त्र विद्या, मल्लकला में प्रवीण हो गया। आज भी मल्लयुद्ध प्रेमी के लिए ब्रह्मचर्य के साथ साथ हनुमान् प्रेरणा का प्रतीक इष्टदेव माना जाता है।

हनुमान् बाल ब्रह्मचारी रहा, कहते हैं कि सात चिरंजीवियों में हनुमान् का चौथा नम्बर है,

'अश्वत्थामा बलि र्व्यासो हनुमांश्च विभीषणः।
कृपः परशुराम श्च सप्तैते चिरजीविनः।।

सुग्रीव से हनुमान् की बाल्य मित्रता थी (शायद सहपाठी हों) जब वालीने सर्वस्व छीन कर सुग्रीव को निकाल दिया तो भी हनुमान् ने उस का साथ नहीं छोड़ा।

'सुग्रीवेण समं त्वस्य अद्वैधं छिद्रवर्जितम्।
आबाल्यं सख्यमभवत्, अनिलस्याग्निना यथा' ।।७।३६।४०।।

- इसने राम से सुग्रीव की मैत्री कराके उसे रंक से राव बना दिया?
- कैसी विकट परिस्थिति में सीता की खोज करके राम एवं सीता को उपकृत किया ?
- सिफ़ारिश करके विभीषण को लंकापति बनवा दिया।
- संजीवनी बूटी लाकर लक्ष्मण के प्राण बचाए।
- युद्धकला में हनुमान् को 'महावीर' की पदवी मिली

पम्पा परिचय में राम ने लक्ष्मण से कहा — देखो इस महापुरुष की वाणी में कितनी प्रगल्भता है, कितना ओज है, कितना आकर्षण है, कितनी दृढ़ता है, कितना वाग्वैभव है ?

- इतने लम्बे भाषण में इसने एक भी अपशब्द नहीं बोला।
- यह वेदों का, नव्य व्याकरण का पण्डित मालूम होता है।
- इसकी वाणी कितनी मधुर एवं धाराप्रवाहवती है, न ऊंची न नीची।
- यह जितना वाग्मी है इसका व्यक्तित्व उतना ही उदात्त है।
- इसकी बातों से जल्लाद का उठा हुआ भी शस्त्र झुक जाए।
- राजदूत हो तो ऐसा।
- साथी हो तो ऐसा।
- मन्त्री हो तो ऐसा।

लक्ष्मण ! तुम इसे सादर अपना परिचय दो।

- और हनुमान् के सुझाव पर राम उसके साथ जाने को झट् तैय्यार हो गया। एवं हनुमान् के इस प्रथम मिलन का प्रभाव राम पर अन्त तक अक्षुण्ण रहा, बल्कि उत्तरोत्तर बढ़ता ही गया, यहाँ तक कि हनुमान् के सामने राम की आँख कभी न उठ सकी।

यही क्यों ? राम ने हनुमान् को सपरिवार आजीवन ऋणी रहने का प्रोनोट भी लिख दिया, आप भी पढ़ लीजिए :

"एवं ब्रुवाणं रामस्तु हनुमन्तं वरासनात्।
उत्थाय सस्वजे स्नेहात्, वाक्यमेतदुवाच च।।
एकस्यैवोपकारस्य, प्राणान् दास्यामि ते कपे।
शेषस्ये होपकाराणां भवाम ऋणिनो वयम्।।" ७।४०।२०-२३।।

अर्थात्—राम ने सिंहासन से उठकर हनुमान् को गले लगा लिया, एवं यह वचन दिया कि हनुमान् ! तुम्हारे एक उपकार पर मेरा जीवन न्यौछावर है, अन्य उपकारों की भरपाई के लिए हम सब तुम्हारे ऋणी रहेंगे।

और मैं तुम्हारे ऋण से मुक्त होना भी नहीं चाहता। क्योंकि जो [illegible] विपत्ति आने पर सहायता करने वाले उपकारी का बदला [illegible] है वह प्रकारान्तर से मित्र की विपत्ति चाहता है। भाव

यह कि जैसे तुमने विपत्ति में मेरा साथ दिया है,—ईश्वर तुम्हारे ऊपर भी विपत्ति लाए और मैं तुम्हारी सहायता करके उऋण हो जाऊं।

'मय्येव जीर्यताम् आशु, यत्त्वयोपकृतं हरे।
नरः प्रत्युपकारार्थी विपत्ति मभिवाञ्छति ॥'

● राम के महा प्रस्थान करने पर हनुमान् भी राम के साथ उत्तराखण्ड में आ गया एवं यमुनोत्तरी के 'बन्दरपुच्छ' नामी शिखर पर रहकर भगवद्भजन में लीन हो गया।

उपसंहार

सुकेश पुत्रों के नेतृत्व में लाखों राक्षस लंका में जाबसे, तदनुसार कुवेर के आधिपत्य में लाखों नैर्ऋत जाति के राक्षसों का वहां बोलबाला रहा, जिससे कुवेर नैर्ऋतराज कहलाया।

फिर रावण के अधीन लाखों वैदिक धर्मी राक्षस इधर उधर से लंका में आ इकट्ठे हुए।

तीनों शासनों में सत्ता परिवर्तन तो हुआ, पर जनता वही (राक्षस) रही।

राम रावण युद्ध में असंख्य राक्षसों के महत्कदन के बाद भी लंका निर्जन नहीं हो गई, ना ही सगे भाई विभीषण के होते रावण के घर दिया बाती जलाने वालों का अभाव हो गया।

और फिर रावण की धर्मपत्नी महामहिम श्रीमती मन्दोदरी देवी के जीते जी ऐसी अपार्थ धारणाओं का अवसर ही कहां उपस्थित हो सकता है।

मेघनाद की पत्नी सती शिरोमणि श्रीमती सुलोचना देवी के सती होने का प्रसंग रामायण में नहीं है, शायद उस समय तक 'सती प्रथा' का चलन भारत में न हुआ हो। सम्भव है उसके बच्चे हों।

अथ च रामायण में राक्षसों के समूलोन्मूलन का उल्लेख कहीं नहीं है, इसके विपरीत विभीषणराज्यारोहण के समारोह का वर्णन है जिसमें राम को भी लड्डुओं का उपहार मिला था।

एवं सबसे बड़ी बात यह है कि पौराणिकों

विभीषण 'सात चिरंजीवियों में से एक है। फिर क्या वह अपने घर दीया भी नहीं जला सकता ?

वास्तव में आज ये श्रीलंकावासी वही राक्षस कुलमूलक है, आज भी इनके नाम (श्री भण्डारनायक) आदि आचार विचार प्राचीन परम्परानुसार हैं।

इधर 'आन्ध्रप्रदेश' के निवासी उन्हीं वाली-सुग्रीव-तार-नल-नील-जाम्बवान आदि महापुरुषों के वंशधर ही हैं। जिला विलारी स्थित द्रोणाचलम् - किष्किन्धा पुरी तो इन वानर वीरों की मुख्य राजधानी थी।

रामायण काल में यहां बड़े बड़े गुरुकुल थे, जहां वाली, सुग्रीव, हनुमान, अंगद, सरीखे विद्याव्रत स्नातकों का निर्माण होता था। जिन्होंने राम के नेतृत्व में जगद्विजयी रावण पर विजय का श्रेय पाया।

आंध्रवासी 'वानर' एवं लंका वासी 'राक्षस' रावण के समय में भी भाई भाई थे, एवं विभीषण के राज्य में भी।

● अन्त में प्रश्न उठता है कि वे लाखों करोड़ों राक्षस और वानर कहां गए ? अब उन के वंशधर कहाँ हैं, कौन हैं। इन प्रश्नों के उत्तर स्पष्ट हैं, वे कहीं नहीं गए, वहीं रहते हैं हां, कुछेक स्थानान्तरित हो गए होंगे यह सम्भव है।

लंका में बौद्ध सम्प्रदाय का प्रचार होने पर अब उसे आदरार्थ **"श्रीलङ्का"** कहा जने लगा है, वहां के निवासी उन्हीं राक्षसों के वंशधर हैं, अलबत्ता कुछ परिवर्तन भी संभव है।

आन्ध्र प्रदेश में कृष्णा तुँगभद्रा नदियों की वादियों में रहने वाले लोग वही किष्किन्धावासी लोग हैं जिन्होंने राम की सहायता के लिये लंका पर आक्रमण किया था, और युद्धोपरान्त वानर एवं राक्षसों में पूर्ववत् सन्धि सद्भाव हो गए।

परिवर्तन देशकालका अवाधित चक्र है, प्रकृति में प्रतिक्षण परिवर्तन होता रहता है, फ़िर यदि आज रामायण के दीर्घकालिक चिन्ह न मिलें तो इस में अचम्भा कुछ नहीं।

❁ इति रावणायनम् ❁

देववा

१.